सकारात्मक सोच की कला

लेखक:-

स्वामी ज्योतिर्मयानन्द

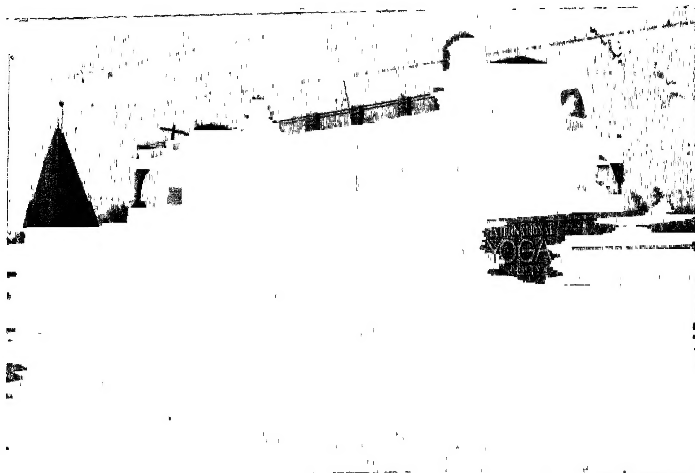


अनुवादक

योगिरत्न डा० शशिभूषण मिश्र

मूल्य- हार्डबाउण्ड -५० रुपये
६०

पुस्तक प्राप्त का स्थान



प्रथम संस्करण –1998

ISBN - 81- 85883 -27 -0

अनुवादक– **योगिरत्न डा० शशिभूषण मिश्र**

प्रकाशक –

इन्टरनेशनल योग सोसायटी,

लालबाग, लोनी, गाजियाबाद उ०,प्र० फोन० 8-600237

मूल अँग्रजी पुस्तक– The Art of Positive Thinking का अविकल हिन्दी अनुवाद।

योग ज्योति प्रेस लालबाग योगाश्रम से मुद्रित

उन सत्यान्वेषियों को सप्रेम समर्पित जो संसार में
सुख, शांति और सामंजस्य स्थापित करने के
लिए जीवन के आध्यात्मिक मूल्यों और
मन की अद्‌भुत शक्तियों को
उद्‌घाटित करने में
संघर्षरत हैं।

'वषय-सूची

अ॰ वादकीय

श्री गुरुदेव की पुस्तक "The Art of Positive Thinking" जब हमें मिली तो एक ही बैठक में सारी-पुस्तक पढ़ गया। हिन्दी में अब तक ऐसी पुस्तक पढ़ने को नहीं मिली थी। चपला की चमक की तरह एक विचार मानस पटल पर जगमगा उठा–"क्यों न इसी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद आरंभ कर दिया जाय" इसी विचार की परिणति है प्रस्तुत पुस्तक ! यदि व्यक्ति अपने विचारों पर नियंत्रण से, सकारात्मक चिंतन का अभ्यास बना ले तो अपने भाग्य को इच्छित दिशा प्रदान कर सकता है। किसी भी परिस्थिति अथवा घटना का सूत्रपात विचारो में होता है। विचार जब तक संकल्प और क्रिया रूप में अभिव्यक्त नहीं हुआ है तब तक इसमें परिवर्तन किया जा सकता है। अत· जो भी जीवन की महान उपलब्धियों और आत्मिक आकांक्षा की अनन्तता में विहार करना चाहते हैं उन्हें सकारात्मक चिंतन की कला में प्रवीणता प्राप्त करनी होगी।



श्री गुरुदेव की लेखनी मे जो प्रेरणा, शक्ति और उदबोधन है उसे लाने की क्षमता मुझ में नहीं है। इसलिए सभी पाठको से हमारा विनम्र निवेदन है कि वे मूल अंग्रेजी पुस्तक **The Art of Positive Thinking** का अध्ययन अवश्य करें। आन्तरिक आनन्द और स्वान्तः सुखाय ही इस अनुवाद का लक्ष्य रहा है।

इसके अध्ययन से यदि आपको थोडी भी प्रेरणा मिलेगी तो मैं अपना सौभाग्य समझूंगा।

श्री गुरुदेव के आशीर्वाद और कृपा से प्रकाशित यह पुस्तक उन्हीं के चरणों मे अर्पित है।

योगिरत्न डा० शशिभूषण मिश्र
स्वामी ज्योतिर्मयानन्द आश्रम
लालबाग, लोनी।

प्रकाशकीय !



मन से बढ़कर अन्य कोई शक्ति नही है। विचारो से आपके भाग्य का निर्माण होता है। सकारात्मक विचार (PositiveThinking) जीवन मे सफलता प्रदान करते है। नकारात्मक (Negative) विचारो से व्यक्ति असफल होता है।

विश्व मे जो भी महान परिवर्तन हुए है, उनके मूल में विचार है। ससार मे जितनी भी बुराइया। हैं उसका कारण है ऋणात्मक विचार और जो भी शुभ, कल्याणकारी और सुन्दर है उसके आधार मे सकारात्म चिन्तन (Positivethinking) है। प्रस्तुत पुस्तक मे श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द ने अपनी प्रेरक लेखनी के माध्यम से आपको गत्यात्मक उपदेश दिया है। अभिव्यक्ति इतनी स्पष्ट और सहज हुई है, कि पाठक अपने मन की जटिलताओं को समझते हुए उन पर विजय प्राप्त करने की विधि जान लेते है। सकल्प शक्ति के विकास और ध्यान के अभ्यास से आपका मन दुर्गुणो को विनष्ट कर सदगुण विकसित करने लगता है।

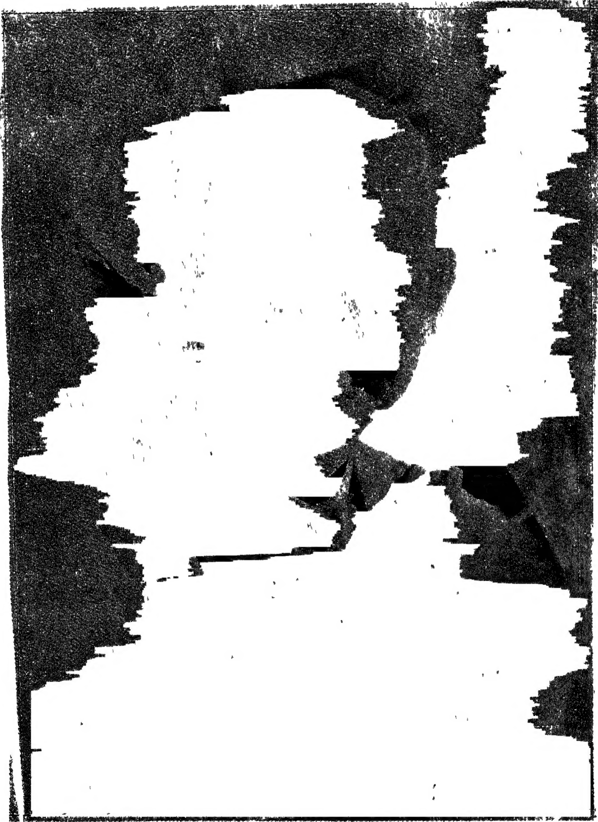
परिणामत आप भौतिक और आध्यात्मिक दोनो ही क्षेत्र मे महान सफलता प्राप्त कर लेते है। श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी महाराज के अनन्य भक्त Dr Antonio Pannochia जब स्वामी जी के साथ रहकर मियामी ,अमेरिका आश्रम मे वेदान्त अध्ययन कर रहे थे तो उन्हे सकारात्मक चिंतन से सम्बन्धित स्वामी जी के अनेक लेख आश्रम की पत्रिका--इन्टरनेशनल योग गाइड मे पढने को मिले। उन्होने स्वामी जी से आग्रह किया कि यदि उन सभी लेखो का सग्रह पुस्तक के रूप मे प्रकाशित किया जाय तो स्कूल, कालेज के छात्र तथा सामान्य जन बहुत लाभान्वित हो सकते हैं।

इस प्रकार डा पैनोचिया के उदारता पूर्वक सहयोग से ही पुस्तक का अग्रेजी तथा स्पैनिश संस्करण निकल सका। इसमें सदेह नहीं की आधुनिक जगत विद्यार्थियों को उन्नत तकनिकी शिक्षा देने की दिशा मे बहुत आगे बढ चुका है। परन्तु जीवन की विभिन्न परिस्थितियो का सामना करने तथा मानव सम्बन्धो में सुख, शान्ति और सामंजस्य विकसित करने की दिशा में प्रभावकारी अन्तर्दृष्टि देने मे आधुनिक शिक्षाप्रणाली पूरी तरह विफल रही है। आज का विद्यार्थी अनन्त अन्तरिक्ष में स्थित विभिन्न ग्रह नक्षत्रों के खगौलिक अध्ययन मे अद्‌भुत मानसिक प्रतिभा का परिचय देता है। परन्तु दुर्भाग्य से उसे यह ज्ञात नही है, कि जीवन की विषम परिस्थितियो में अपने मन को कैसे सम्हाले। ना ही उसे उदास मन को उल्लसित मन मे परिवर्तित करने की कला का ही ज्ञान है। प्रस्तुत पुस्तक में इसी कला को विकसित करने का व्यावहारिक मार्गदर्शन दिया गया है। यह पुस्तक जीवन के गहरे मार्ग पर आपको आगे बढने के लिए प्रेरक पथ प्रदर्शिका भी है। पाठकों के लिए यह पुस्तक शक्ति, साहस और प्रेरणा का आश्चर्यजनक स्रोत सिद्ध होगी।

आप सबों को सुख, समृद्धि, सफलता और आध्यात्मिक प्रबुद्धता प्राप्त हो।

स्वामी ललितानन्द

योग रिसर्च फाउन्डेशन, अमेरिका, मियामी



स्वामी ज्योतिर्मयानन्द

I

सकरात्मक सोच
की
कला

—

विचार से बढ़कर और
कोई शक्ति नहीं
है ! विचारों
के द्वारा
मनुष्य
अपने
व्यक्तित्व
को इच्छित
स्वरूप प्रदान
कर अपने भाग्य
का नवनिर्माण कर
सकता है।

१

सकारात्मक सोच की शक्ति

विचार शक्ति से बढकर इस पृथ्वी और स्वर्ग मे कही कोई अन्य शक्ति नहीं है। आप जैसा सोचते है, वैसा ही बन जाते है। जीवात्मा के हाथ मे मन एक अदभुत् और रहस्यमय उपकरण है। सकारात्मक दिशा मे मन लगाकर व्यक्ति विकास की कल्पनातीत ऊँचाई तक पहुँच सकता है। इसके विपरीत ऋणात्मक दिशा मे चलकर गहरी खाई मे गिर सकता है।

सकारात्मक चिन्तन का अर्थ ऐसी मानसिकता विकसित करना है जो ईर्ष्या, क्रोध, लोभ और अन्य ऋणात्मक वृत्तियो से प्रभावित नहीं होती है। मुदिता, शुभकामना, समता, शान्ति और क्षमा के स्पन्दनों से पूर्ण मन ही सकारात्मक मन है। आपकी तन्त्रिकातंत्र और शरीर पर मन का प्रत्यक्ष एवं सीधा प्रभाव पडता है। आपके चतुर्दिक जितनी भी वस्तुयें है उन सबको परोक्ष रूप से आपका मन प्रभावित कर सकता है। इतना ही नहीं, अत्यन्त विकसित मन समस्त ससार को प्रभावित करता है तथा यह प्रभाव शताब्दियो तक बना रह सकता है। महामानवो ने अपनी सशक्त मानसिकता से विश्व मे महान परिवर्तन किये है। आज भी ससार

मे सुख, शान्ति और सामंजस्य लाने की रहस्यमय कुजी महान आत्माओ की मनोशक्ति में छुपी है। इसलिए साधक को सकारात्मक सोच (Positive thinking) की कला में प्रवीण होना आवश्यक है।

विचारों के वाण

वाणों की तरह मन से विचार निकलते रहते है। वे लक्ष्य भेद करने के पश्चात पुन. उसी व्यक्ति के पास वापस लौट आते हैं जिसने उन विचारों को उत्पन्न किया है। इसलिए यदि आप शुभ विचार प्रेषित कर रहे हैं तो ये वैचारिक जगत मे चलते हुए उन लोगो तक पहुँचते हैं जिनकी ओर लक्षित किये गये थे। रचनात्मक विचार—वाण पुन आपके पास लोगो के आशीर्वाद, सद्भावना और शुभकामना लेकर लौट आते है और आपका मन अधिक से अधिक प्रेरित, प्रसन्न और उत्साहित हो जाता है।

दूसरी ओर जब विध्वसात्मक ऋणात्मक विचार अपने लक्ष्य की ओर जाते हैं तो परिणाम इससे भिन्न होता है। यदि लक्ष्य अधिक सशक्त है तो आपके ऋणात्मक विचार उसका भेदन नही कर पाते और वे विचारों वाण लक्ष्य तक नही पहुँचने के कारण थोडा क्रोधित होकर अधिक वेग से आपके ऊपर ही वार करते हैं। यह शुभ और अशुभ विचारों के वाण की क्रियाशीलता का एक प्रतीकात्मक चित्रण है।

जब आप शुभ विचार उत्पन्न करते है तो आपका मन धीरे धीरे उन्नत होने लगता है। आप एक सकारात्मक मन विकसित कर लेते हैं जिसमें सकारात्मक और सृजनात्मक विचार स्वत ही उठते रहते हैं। यदि आप दूसरों के प्रति अशुभ विचार रखते हैं तब आप का मन धीरे—धीरे निम्न स्तर मे जाने लगता है और अनेक कुसस्कार उत्पन्न होते हैं। इन कुसंस्कारों के कारण आप की तत्रिकातंत्र में तनाव उत्पन्न हो जाता है।

विचारों से शारीरिक स्वास्थ्य कैसे प्रभावित होता है ?

नाड़ियो में प्रवाहित होने वाले प्राणों से मन का सीधा सम्बन्ध है। नाडियों की कियाशीलता आपके विचारों पर निर्भर करती है। यदि आपके विचार सकारात्मक और उन्नत हैं तो नाडियां खुल जाती हैं और उनसे प्राणों का निर्वाध प्रवाह होने लगता है। यदि आपके विचार विध्वंसात्मक और अशुभ हैं, तो नाड़ियां असंतुलित हो जाती हैं। कुछ नाडियां अधिक तेजी से कार्य करने लगती है जबकि कुछ नाडियां मन्द अथवा निष्क्रिय हो जाती हैं। इससे आपके मन में तनाव उत्पन्न होता है।

प्राणों में असंतुलन के कारण आपके शरीर के विभिन्न अवयवों में असंतुलन हो जाता है। आयुर्वेद सिद्धान्तों के अनुसार वायु, पित्त और कफ में विद्यमान आपसी संतुलन समाप्त हो जाता है। इन तीनों के असंतुलन से शरीर में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

· इसलिए आपके विचार प्रतिपल आपके शरीर को प्रभावित करते रहते हैं। इस तथ्य को दैनिक जीवन में बहुत सहज ही देखा जा सकता है। जब आपके मन में आनन्द और उत्साह का एक विचार उत्पन्न होता है तो आपका मुखमण्डल एक अज्ञात प्रसन्नता और आनन्द के कारण चमकने लगता है। इसके विपरीत मन में किसी कुविचार के आते ही आपका चेहरा तनाव ग्रस्त हो जाता है। मन व्यक्तित्व का दर्पण बन जाता है। यदि आप अपने मन में निरन्तर ऋणात्मक विचार बनाए रखते हैं, तो आपके मुखमण्डल की चमक तथा स्वाभाविक सौम्यता समाप्त हो जाती है। जब आप हमेशा आंखें दिखाते रहेंगे तो आपका चेहरा डरावना हो जाएगा।

पल भर मे ही एक सुखद् विचार आपकी तंत्रिका तंत्र मे धनात्मक परिवर्तन ला देता है। दूसरे ही पल यदि कोई अशुभ समाचार मिलता है अथवा कोई चिन्ता आपके मन में हो जाती है तो तनाव की काली

घटा आपको घेर लेती है। प्राणो का प्रवाह सीमित हो जाता है तथा आप दुर्बल हो जाते है।

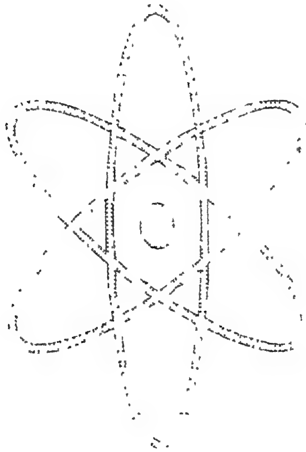
यद्यपि शरीर पर विचारों का प्रभाव इतना शीघ्र और नाटकीय ढग से होता है फिर भी आपके व्यक्तित्व और शरीर को स्वस्थ तथा सुन्दर बनाने की सकारात्मक सोच की जो शक्ति है वह दीर्घकालीन अभ्यास पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए मान ले कि आप अपने आपको दुर्बल और असहाय अनुभव कर रहे है परन्तु, स्वय को स्वस्थ और चुस्त अनुभव करने के लिये आप को धनात्मक विचार प्रस्तुत करना पड़ेगा। जिस में आप स्वयं को शक्ति से स्पन्दित होते देखें। इसी भाव को आप प्रतिदिन बनाए रखिये। ऐसा लम्बे समय तक करना पड़ेगा। मान लें कि पॉच दिनो के इस अभ्यास के बाद आप अधिक रोगी हो गये तो क्या आप को यह सोच लेना चाहिए कि सकारात्मक सोच का कोई प्रभाव नही होता? नहीं। आपके शुभ विचार अब भी क्रियाशील हैं परन्तु उनका प्रभाव तात्कालिक नहीं है। आपके विचार और शरीर मे जो सम्पर्क है वह कई परिस्थितियों और बातो पर निर्भर करता है सकारात्मक मन के शुभ प्रभाव भले ही विलम्ब से आते दिखाई पड़ परन्तु वे होंगे अवश्य।

सकारात्मक सोच से सृजनात्मक कर्मो को प्रेरित करें

इसके अतिरिक्त साधक को यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि सकारात्मक चिन्तन के साथ – साथ उसे सृजनात्मक क्रियाओं में भी लगे रहना होगा । किसी छात्र ने अपनी पढ़ाई ठीक ढंग से नही की है और परीक्षा आते ही वह सकारात्मक विचार करने लगता है–'मुझे परीक्षा में सर्वश्रेष्ठ आना है। मै इस परीक्षा में सर्वप्रथम आऊँगा'' । उसने अपने विचारों को सकारात्मक अवश्य रखा है, परन्तु उसकी क्रियाये उस अनुरूप नहीं हुई है। इसलिए उसे सफलता नहीं मिलेगी। यदि आप

केवल सकारात्मक चिन्तन करके बहुत अच्छे परिणाम की आशा करते है तो आप अपने समस्त तत्रिकातंत्र को ही दबाव में रख रहे है।

इसके विपरीत आप सकारात्मक कार्य मे सलग्न रहते हुए इस धारणा को पुष्ट करे कि चाहे कितना विलम्ब क्यो न हो इसका निश्चित रूप से शुभ परिणाम होगा। धीरे–धीरे आपके व्यक्तित्व का ऋणात्मक आधार समाप्त होता जाएगा और उसके स्थान पर धनात्मक स्वरूप प्रतिष्ठित और सुदृढ होगा। जब आप रचनात्मक चिन्तन के अद्भुत प्रभाव का अनुभव करने लगेगे तो न केवल आपका शरीर बल्कि, परिस्थितिया भी इस प्रकार परिवर्तित होने लगेंगी जिससे जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति होगी। सकारात्मक सोच का अन्तिम लक्ष्य भी यही है।



सकारात्मक सोच की विधि

प्रतिपक्ष भावना का अभ्यास

सकारात्मक सोच का अर्थ है अपने मन को निराशा, चिन्ता, असफलता एवं तनाव से अलग रखते हुए क्रोध, लोभ, द्वेष और अहंकार जैसे ऋणात्मक भावों से पूर्णतः मुक्त रखना। इसका अभिप्राय इन दुर्गुणों को दूर कर उनकी जगह सद्गुणों को स्थापित करना है। राजयोग में प्रतिपक्ष भावना के नाम से विख्यात एक बहुत उपयोगी प्रणाली का वर्णन किया गया है। इसकी तीन अवस्थायें हैं। **'दमन,'** इसमें आप बुरे विचारों को अपनी संकल्प शक्ति से रोकने का प्रयास करते हैं। **'प्रतिस्थापन,'** दमन के साथ–साथ उसके स्थान पर जो भी शुभ और अच्छा विचार है उसे दृढ़तापूर्वक मन में लाना होता है। **'[illegible]'**, इसमें ऋणात्मक विचार उत्कृष्ट विचारों में रूपान्तरित हो जाते हैं। आप यह देखकर आश्चर्यचकित हो जायेंगे कि जिसको पराजित करना असंभव लगता था उसे जीत लिया गया है।

दमन (पहली अवस्था)

इस अवस्था मे आप ऋणात्मक विचारो को मन मे उठते ही पहचानते हैं, तथा आरंभिक अवस्था में ही रोकने का प्रयास करते हैं। इसके लिए कोई विशेष बल लगाने की आवश्यकता नहीं पडती, बल्कि सहज संकल्प मात्र से ही उन्हें दमित किया जा सकता है। आपको निरन्तर अपने मन का निरीक्षण करते रहने की आवश्यकता है। मन मे ऋणात्मक विचारों को कभी आश्रय नही दे। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप क्रोधी प्रकृति के है, अथवा बात–बात मे झूठ बोलने की आदत है, तो आप यह निष्कर्ष नहीं निकालें कि इन बुरी आदतों के विषय में कुछ नही कर सकते हैं। ऐसा नहीं कहिए–"मै एक दुर्बल संकल्प का व्यक्ति हूँ। पूर्व जन्म के बुरे कर्म फलित हो रहे हैं, इसलिए मैं कर ही क्या सकता हूं।" ऋणात्मक तथा विध्वंसात्मक विचारों को ऐसा कह कर सही सिद्ध करने का प्रयास नही कीजिए। इसके साथ–साथ किसी ऋणात्मक विचार के आते ही आप अत्यधिक व्यग्र और अशान्त भी नहीं हो जाइए, क्योंकि ऐसा होने से आपकी ऋणात्मकता और अधिक प्रबल होगी।

प्रतिस्थापन (दूसरी अवस्था)

इसके विपरीत जब मन में ऋणात्मक–अशुभ विचार उठने लगे तो उसे सहज संकल्प से रोकने का प्रयास करते हुए मन मे उसके विपरीत धनात्मक और शुभ विचार विकसित करने का प्रयास कीजिए। जिन ऋणात्मक विचारो से आपका मन विकृत हो रहा है उसके स्थान पर शुभ एवं धनात्मक विचार प्रतिस्थापित करने का प्रयास कीजिए। आपके मन में जो भाव प्रबल हो रहे हैं, उनके ठीक विपरीत भावो का

चिन्तन आरभ कीजिए। प्रतिपक्ष भावना की यह दूसरी अवस्था है जिसे **प्रतिस्थापन** कहते है।

उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप किसी चीज को लेकर बहुत चिन्तित हैं। इस भावना पर विजय प्राप्त करने के लिए आप ऐसे महामानवों के विषय में सोचना आरभ कीजिए जिन्हे कभी कोई चिन्ता नहीं हुई। बुद्ध, ईसा अथवा अन्य आध्यात्मिक आदर्शों के शान्त, सौम्य और तनाव रहित मुखमण्डल को देखने का प्रयत्न कीजिए। अपने मन के समक्ष मुदिता की भावना प्रस्तुत कीजिए। मन को शान्त और शिथिल बनाइए। जब आप क्रोधित हों तो मन के समक्ष क्षमा का भाव उपस्थित कीजिए। आप देखेंगे कि ऐसा करने से क्रोध प्रेम में परिवर्तित हो जाता है।

परिष्करण (तीसरी अवस्था)

जब आप प्रतिस्थापन का प्रयास करेंगे तो भी ऋणात्मक विचार बार–बार मन में प्रवेश करेगे। परन्तु धीरे–धीरे इनका आवेग और प्रभाव कम होता जाएगा तथा अन्त में ये समाप्त हो जायेंगे। धनात्मकता का प्रभाव बढ़ेगा। इसके लिए कुछ अवधि तक धैर्य पूर्वक प्रयास बनाए रखने की आवश्यकता है। जब आप प्रतिस्थापन का क्रम बनाए रखेंगे तो आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि ऋणात्मक विचारों का परिष्करण हो गया है और अब वे पूर्णतः धनात्मक विचार में रूपान्तरित हो गए हैं। यही प्रतिपक्ष भावना की तीसरी अवस्था, **'परिष्करण'** है।

विगत में ही नहीं खोये रहिए

धनात्मक भावों को विकसित करने के क्रम मे कभी भी इस खोज मे नहीं उलझिये कि आपके मन में ऋणात्मक विचारो का प्रवाह कब

और कैसे आरभ हुआ। इस बात की चिन्ता नही कीजिए कि इन ऋणात्मक विचारो का आरभ आपकी बाल्यावस्था में उस समय हुआ जब आपके माता–पिता ने आपको प्रताडित किया था अथवा इन विचारो की जडे वर्तमान की विपरीत और ऋणात्मक परिस्थितियो मे है। इस प्रकार की सोचावट उत्कृष्टता के ऊँचे सोपानों पर चढने वालो के लिए आवश्यक नही है। इस प्रकार के विश्लेषणो को मनोवैज्ञानिकों के लिए ही छोड देना चाहिये। मनोरोगो से पीडित व्यक्तियो की चिकित्सा के लिए उन्हे ऋणात्मक विचारो के स्रोत जानने की आवश्यकता हो सकती है। इसलिए इसे उन्ही का सिर दर्द रहने देना चाहिए।

यह कब आरभ हुआ यह प्रश्न आध्यात्मिक साधको के लिए महत्वहीन है। क्योंकि इसका कारण इस जन्म मे खोजना अचेतन के अनन्त विस्तार में प्रवेश करने के लिए अनावश्यक समय खर्च करने के सदृश है। क्योकि आपके एक नही असख्य जन्म हुए है। समस्या का यह कोई समाधान नहीं है।

आत्मा के स्वरूप में गहन अन्तर्दृष्टि उत्पन्न करके ही आप विपरीत परिस्थिति की समस्या समाप्त कर सकते है।

परम धनात्मक-परमात्मा को अपने अन्तर्मन में उद्घाटित कीजिए

अपनी आत्मा के विषय में जैसे–जैसे आपको अधिक समझ होती जाएगी आप अनुभव करेंगे कि इसकी धनात्मक शक्ति से सभी प्रकार की ऋणात्मकता पर विजय पाई जा सकती है। आपके अन्दर शान्ति और समता का अनन्त सागर विद्यमान है। आपके अन्तर्मन में अनन्त प्रकाश पुंज है। जब अपनी आत्मा की खिडकी आप इस प्रकाश की ओर खोलेंगे तो आपके मन का अन्धकार स्वत. समाप्त हो जाएगा। इस खिडकी मे थोडा जंग लग गया है इसलिए इसे खोलने में कुछ समय लगेगा। परन्तु चाहे कितना भी समय क्यों न लगे, आपको धैर्य पूर्वक

प्रयास बनाए रखना चाहिए। इस लक्ष्य की प्राप्ति मे चाहे कितनी बार भी आपका मन विचलित और असफल क्यो न हो जाए, आप मे जब भी ऋणात्मक भाव आए उसकी उपेक्षा कीजिए। ऋणात्मकता भूत की तरह भ्रामक और मिथ्या है। परमात्मा के रूप में परम धनात्मक वास्तविकता आपके अन्तर्मन में विद्यमान है।

परिवर्तन नहीं बल्कि रूपान्तरण लक्ष्य है

रचनात्मक चिन्तन और प्रतिपक्ष भावना के अभ्यास का लक्ष्य व्यक्तित्व मे आमूल रूपान्तरण करना है। जो लोग योग मार्ग का अनुसरण नहीं करते या जिन्हे जीवन के विषय मे गहन अन्तर्दृष्टि नही है, वे केवल बदलते जाते है। उन में रूपान्तरण नही होता। उनकी ऋणात्मक वृत्तियॉ बनी रहती है। उन में केवल सतही परिवर्तन होता है। इस प्रकार समाज में ऐसे अनेक व्यक्ति है, जो व्यावहारिक दृष्टिकोण से बहुत शिक्षित और विकसित माने जाते हैं, परन्तु उनमे आज भी वे सभी ऋणात्मक वृत्तियॉ विद्यमान हैं जो उनकी किशोरावस्था मे भी थी। उनमें वही भय, आसक्ति, अहंकार, क्रोध, उत्तेजना आज भी है। हो सकता है कि उनका सतही रूप भले ही कुछ बदल गया हो। साधारण व्यक्ति उनकी इन दुर्बलताओ को कहने का साहस नहीं करता। क्योकि उनके सभी दुर्गुण उनकी तथाकथित विद्वता के संतही आवरण में छुपा हुआ है। जब किसी लब्धप्रतिष्ठित व्यक्ति से कोई उनके दुर्गुणों को कहने की सोचता है तो उसकी उपलब्धियो और सामाजिक स्थिति को देखकर सतही महानता से भयभीत हो जाता है और कुछ कहने का साहस नही जुटा पाता। विद्वता उपार्जित करने के सन्दर्भ मे तो निश्चय ही वह महान हो सकता है, परन्तु सबसे बडी महानता और उपलब्धि है। व्यक्तित्व में मूलभूत रूपान्तरण लाना।

३

आध्यात्मिक निश्चय की कला

सकारात्मक सोच के लिए आवश्यक आध्यात्मिक निश्चय के विषय में कुछ और अन्तर्दृष्टि देना चाहूँगा। जिस गुण का आपके व्यक्तित्व मे अभाव है उसे विकसित करने के लिए सर्वप्रथम शान्त मन से चुनाव कर लीजिए। उस गुण को अपने मन के समक्ष एक सप्ताह या एक माह तक निरन्तर बनाये रखिए। उदाहरण के लिए आप अपने व्यक्तित्व मे धैर्य का विकास करना चाहते है, तो **धैर्य** शब्द को बडे अक्षरो में लिखकर अपने कमरे मे ऐसी जगह लगा दे जहा आपका ध्यान बार–बार जाता हो। इससे आप इस शब्द के साथ मानसिक रूप से धनात्मक संगति उत्पन्न करेंगे, भले ही आप उसे देखते हों अथवा नहीं। जिस अवधि में आप धैर्य विकसित करने की साधना कर रहे हों, उसका दृढता पूर्वक निश्चय कीजिए कि आप मे इस सद्गुण का विकास हो रहा है। आप धैर्यवान है। यह अभ्यास धैर्यपूर्वक करना होगा। यदि दो तीन दिन के अभ्यास के पंश्चात आप पाते हैं कि अभी भी आप में धैर्य का अभाव है तो इसका यही अर्थ है कि आपको धैर्य के विकास के लिए और अधिक समय तक धैर्य पूर्वक अभ्यास करने की आवश्यकता है।

आपका वास्तविक स्वरूप धनात्मक है

जब आप दृढता पूर्वक यह निश्चय करते है कि आप सद्‌गुणो के स्वामी है, तो यह स्वीकारोक्ति किसी भावनात्मक कल्पना अथवा अहंकारिक आवेग पर आधारित नही है। यह धारणा नहीं बनाइए कि जिसका आप दृढता पूर्वक निश्चय कर रहे है, यह आपसे पृथक कोई दूर की वस्तु है। जब आप यह स्वीकार करते है, कि कोई गुण विशेष आपमें विद्यमान है, तो आपका अचेतन मन इसका विरोध नही करता। सत्संग और सद्‌ग्रन्थों के स्वाध्याय से आप यह अच्छी तरह समझ ले कि आपकी अन्तरात्मा सभी दुर्गुणो और विकारों से रहित है। यह दिव्य गुणो का अनन्त सागर है। आप जो भी दृढतापूर्वक निश्चय कर रहे है, वह वास्तविक और अधिकृत हैं। आपके अन्दर जो ऋणात्मक विकृतियां और दुर्गुण है वे वास्तव में सतही हैं। उनका आपके वास्तविक स्वरूप से कोई सम्बन्ध नहीं है। अपने आपको सशक्त परामर्श देने का यह अर्थ नही है कि आप स्वय को सम्मोहित कर रहे है।

इसके विपरीत यह आत्म जागृति की एक प्रकिया है। आप वास्तव में जो हैं उसकी स्मृति ही स्वयं को करा रहे है। आप जो नहीं हैं, उसे अपने उपर आरोपित नहीं कर रहे है। सम्मोहन की अवस्था में आप जो नहीं है, उसमे भी सम्मोहित किये जा सकते हैं। इस प्रकार सम्मोहन और योगविधि से अपनी धनात्मक प्रवृत्ति के विषय मे सशक्त परामर्श देना, इन दोनो कियाओं मे बहुत अन्तर है।

सत्व आपकी दृढ़ स्वीकारोक्ति को और गहरा बनाता है

अपने धनात्मक स्वरूप का निश्चय करते समय आप कोई पाखण्ड आथवा आडम्वर नही करते । इसके विपरीत आप स्वरूपत: जो है, उसको

स्वीकार करते है। आपके व्यक्तित्व मे जब सात्विकता का विकास तीव्र होगा तब आपका निश्चय और अधिक दृढ़ होगा। परन्तु जब आप रजस के प्रभाव मे रहेगे तो आपकी स्वीकारोक्ति मात्र शाब्दिक और सतही हो जाएगी। व्यक्तित्व मे तमस की प्रबलता के साथ आप पायेंगे कि आप जिसका भी दृढतापूर्वक निश्चय करते है आपका अचेतन मन उसका विरोध करता है। इसलिए अपने दैनिक जीवन में सात्विकता विकसित करना आवश्यक है। अपने जीवन को जटिल न बनाये तथा स्वयं को ऋणात्मक एव बुरे प्रभावो से भी बचाये रखें। जैसे—जैसे सात्विकता का विकास होगा वैसे—वैसे धनात्मक स्वरूप के विषय में आपका निश्चय भी गहरा होता जाएगा। आप अपने व्यक्तित्व में अधिक से अधिक समता और सामजस्य का अनुभव करेगे।

जब मन सर्वाधिक सुग्राही होता है

दिन मे कुछ ऐसे अवसर आते है जिसमे आपका मन सर्वाधिक सुग्राही—(ग्रहणशील) रहता है। स्वय को सशक्त परामर्श देने के लिए यही समय सर्वश्रेष्ठ हुआ करता है। जब आप प्रातःकाल सो कर उठते है, स्नान करते हैं, भोजन करते है तथा जब सोने जाते हैं उस समय आपका मन सबसे अधिक ग्रहणशील हुआ करता है। उस समय आप जो भी दृढ़तापूर्वक निश्चय करते है, वह अचेतन की गहराई मे स्थाई रूप से स्थित हो जाता है। इसलिए साधको को सोने से पूर्व ध्यान करने तथा स्नान और भोजन करते समय मंत्र जपने की प्रेरणा दी जाती है। हिन्दू सस्कृति में इस समय के लिए कुछ विशेष मंत्र और भजन निश्चित किए गए हैं।

अपने निश्चय के अनुरूप कार्य भी कीजिए

अपने विषय में जब आप शुभ भावों को दृढता पूर्वक निश्चय करने का अभ्यास कर रहे हो, तो यह जान लेना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण

है कि आपकी व्यावहारिक क्रियाओं को भी आपके धनात्मक निश्चय के अनुरूप ही होना चाहिए। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप दृढतापूर्वक यह निश्चय कर रहे हैं–'मैं भय रहित आत्मा हूँ' तो आप सावधानी पूर्वक अपने मन का निरीक्षण करते रहिये कि दैनिक जीवन में छोटी–छोटी बातों से आप भयभीत तो नहीं हो रहे है ? जहाँ तक संभव हो आप निर्भय होकर अपने कार्य सम्पादित कीजिए। अपने धनात्मक निश्चय को केवल सैद्धान्तिक ही नही रखिए।

दूसरों में वर्तमान धनात्मक गुणों को पहचानिये

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि अन्य लोगो में विद्यमान सद्‌गुणो को आप अवश्य पहचानिये। उनकी बुराइयों को ही नहीं देखिये। यदि आप स्वयं मे निर्भयता, मुदिता अथवा विनम्रता का विकास कर रहे हो, तो इन गुणों को दूसरों में भी विकसित करने का प्रयास कीजिए। आप दूसरों को दु खी बनाकर यह नहीं कह सकते है कि–"मै निर्भय आत्मन् हूँ"।

अपनी शक्ति दूसरों में भी प्रेषित कीजिए

इसके अतिरिक्त आपको एक ऐसे वातावरण का निर्माण करना होगा जिसमें आप स्वय में जिन सद्‌गुणों को विकसित करना चाहते हैं, उसे दूसरो मे भी देख सकें। आपके सद्‌गुण के विकास का क्रम ऐसा प्रभावशाली हो कि लोग आपस में यह कहने लगें–"उसे देखो, उसमें कितना परिवर्तन होने लगा है।"

"वह हमेशा निर्भय और प्रसन्न रहता है।" जिस सद्‌गुण को विकसित करने का आप अभ्यास कर रहे है, उसके माध्यम से ही जब लोग आपको जानने पहचानने लगते है, तो आपको बहुत अधिक प्रोत्साहन मिलता है। इसके साथ–साथ आपको मानसिक रूप से ऐसा

शक्तिशाली भी होना चाहिए कि जब आपके आस–पास के लोग आपकी आलोचना करने लगे अथवा आपके विषय मे गलत और ऋणात्मक विचार व्यक्त करने लगे तब भी आप हतोत्साहित हुए बिना सद्‌गुण विकसित करने के अभ्यास मे सतत लगे रहे।

धर्मांध बनने के बदले अच्छे होने के लिए संघर्ष कीजिये

अपने मन के समक्ष आप जिस धनात्मक रूप को प्रस्तुत कर रहे हैं, उसे विवेक पर अवलम्बित होना चाहिए। इसका अभिप्राय यह है कि आप मन मे किसी प्रकार की धर्मान्धता को नही बढने दे। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति पाच फुट लम्बा है, तो उसे सकारात्मक सोच (Positive thinking) से सात फुट लम्बा बनने का प्रयास नही करना चाहिए या कोई यदि अपने सिर पर सींग उगाना चाहता है, तो उसे धनात्मक निश्चय से सफलता पाने का प्रयास नहीं करना चाहिये। ये सब अनुचित एवं अविवेकी कल्पनाये हैं। आपका धनात्मक निश्चय आपके व्यक्तित्व के अनुरूप और विवेक पूर्ण होना चाहिए जिसका आधार सहज युक्ति हो। कट्टरपन अथवा धर्मान्धता पर आश्रित किसी चीज के लिए इस प्रकिया का उपयोग नहीं करे। क्योंकि यह केवल मानसिक शक्ति का अपव्यय होगा।

धनात्मक निश्चय द्वारा आप आत्मसाक्षात्कार तक पहुँच सकते हैं

परामर्श की शक्ति अद्‌भुत है। यदि आप सकारात्मक रूप से आत्म परामर्श के द्वारा धनात्मक निश्चय का अभ्यास करेंगे तो आपका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही रूपान्तरित हो जाएगा। सकारात्मक परामर्श (Positive

Suggestion) की सहायता से आप प्रखर स्वास्थ्य विकसित कर सकते हैं।

इसलिए मन के समक्ष दुःख, विपत्ति और निराशा के ऋणात्मक भावों के बदले जो भी बनना चाहते हैं, उसका धनात्मक स्वरूप प्रस्तुत कीजिए। जब आपका मन रचनात्मक और सकारात्मक भावों से भरा रहेगा तो आप अपनी ओर अनुकूल परिस्थितियां और परिवेश आकर्षित कर सकेंगे। आपकी आत्मा में अनन्त संभावनायें हैं। जैसे–जैसे आप आगे बढ़ते जायेंगे आपको आशातीत परिणाम प्राप्त होगे। आप संसार के प्रति अपने दृष्टिकोण को पूरी तरह रूपान्तरित कर अन्त मे आत्मज्ञान प्राप्त कर लेगे।





४

अभ्यास की म ृत्ता

अभ्यास की महिमा

सकारात्मक सोच विकसित करने के लिए अभ्यास की अत्यधिक आवश्यकता है। यदि आप सद्ग्रन्थों के निर्देशों पर आधारित दैनिक जीवन के लिए एक योजना बनाकर नियमित उसका अनुपालन करेंगे तो आपके अचेतन मन में नवीन संस्कारों का सग्रह आरंभ हो जाएगा।

आपका अचेतन मन यदि उद्वेग, उत्तेजना, भय, द्वंद्व और अन्य ऋणात्मक संस्कारों से भरा पड़ा है, तो आपकी दैनिक जीवन की क्रियायें इन भावों से निश्चित प्रभावित होगी। इसके विपरीत यदि आपने योगानुशासन के आधार पर सुनियोजित और सात्विक दिनचर्या अपनाया है, तो आपके अचेतन मन में धनात्मक संस्कार प्रकट होंगे जिससे आपका जीवन रूपान्तरित हो जाएगा।

इस प्रकार की जीवन शैली में प्रतिदिन प्रातः जागरण, प्रार्थना, ध्यान, आसन, प्राणायाम, दैनिक कर्तव्यों का पालन, सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय तथा सत्संग सम्मिलित है। आप इस बात का सतत ध्यान रखें कि गलत एवं ऋणात्मक प्रवृत्ति के व्यक्ति की संगति आपको न मिले। यदि आप अपने दैनिक जीवन में इन बातों का ध्यान रखेंगे तो आपके अचेतन मन में शुभ संस्कारों का सूत्रपात होगा। परिणामत जहां पहले

ईर्ष्या, द्वेष, भय, उत्तेजना और द्वद्व के सस्कार थे उनकी जगह मुदिता, शान्ति, सामजस्य और निर्भयता के संस्कारो का बीजारोपण हो जाएगा। जैसे–जैसे शुभ सस्कार बढ़ते जायेगे वैसे–वैसे आपके व्यक्तित्व मे रूपान्तरण होता जाएगा। साधक होने के नाते आपको यह अच्छी तरह जान लेना चाहिये कि आप के व्यक्तित्व मे परिवर्तन की अनन्त सभावनाये है। आपको यह धारणा नही बनानी चाहिए कि–"अभी मै जैसा हूॅ वही रहूँगा। मुझमे कोई परिवर्तन संभव नही है।" चूकि आप स्वरूपतः ब्रह्म है इसलिए आपके अन्दर अनन्त शक्ति और स्वतंत्रता विद्यमान है। इसलिए केवल सतत प्रयास की आवश्यकता है। आप अपनी साधना को बीच मे ही छोडकर उन्नत्ति और विकास की दिशा में बढते हुए अपने कदमो का विरोध न करे। एक बार जब आप कोई कार्यकम अपना ले तो उसे नियमित रूप से पालन करते चले।

सोडा वाटर का जोश

साधारणत अधिकाश लोगों के साथ यह होता है कि जब वे योगाभ्यास अथवा योगाध्ययन आरंभ करते है तो उनको बहुत अधिक जोश होता है। उदाहरण के लिए यदि कोई छात्र योग का अध्ययन के लिए आता है तो उसके मन मे इतनी प्रेरणा, उल्लास और जोश होता है कि वह तीन चार घण्टों तक लगातार योग की पुस्तके पढ लेता है। कभी–कभी तो वह पूरी रात जागते हुए योग दर्शन की पुस्तकें पढता है। परिणातम. उसे बहुत अधिक थकावट हो जाती है। फिर उसे योग की पुस्तको से अरूचि हो जाती है। वह स्वय को बोझिल मन·स्थिति में पाता है और महीनो तक योग की किसी भी पुस्तक का अध्ययन नही करता। कुछ दिनो के पश्चात उसे यह अनुभव होता है कि उसे योग अध्ययन छोडना नहीं चाहिए था। परन्तु तब तक बहुत बिलम्ब हो चुका होता है।

बहुत जोश मे आना एक भयानक भूल है। आपको अपना जोश नियत्रित रखना चाहिए। कुछ दिनो तक बहुत जोश मे रहने से अच्छा है लम्बे समय तक नियत्रित जोश बनाए रखे।

बहुत अधिक जोश को साधारण बोल चाल मे "सोडा वाटर का जोश" कहा जाता है क्योकि जब आप सोडावाटर की बोतल खोलते है तो उसमे से बहुत गैस और झाग निकलती है जो शीघ्र ही समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार से कुछ लोगो का व्यक्तित्व भी ऐसा होता है। किसी कार्य के आरभ मे उनमे बहुत अधिक उत्सुकता और जोश रहता है परन्तु यह, शीघ्र ही समाप्त हो जाता है। इसे नियंत्रित करने की आवश्यकता है।

आध्यात्मिक प्रवेग प्राप्त करें

आप ऐसी संतुलित जीवन शैली अपनाये कि किसी भी परिस्थिति और प्रतिकूलता मे उसका अनुपालन कर सकें। यह सही है कि आप जैसा चाहते है वैसा अनुकूल समय आपको रोज–रोज नहीं मिल सकता। फिर भी अपने दैनिक जीवन मे आप कुछ समय तक ध्यान, प्रार्थना, स्वाध्याय और सेवा कर सकें ऐसी व्यवस्था तो बनानी ही चाहिए। इस प्रकार निर्वाध रूप से अपनी साधना बनाये रखना ही अभ्यास कहलाता है।

अनियमित साधना में आप ध्यान, जप, स्वाध्याय, सेवा इत्यादि का अभ्यास दो चार दिनो तक तो करते है, परन्तु बाद में कई दिनों के लिए इन्हे छोड देते हैं। इसके पश्चात कुछ समय के लिए पुनः इनका अभ्यास करते है। परन्तु अनियमित साधना प्रभावी नहीं होती। इससे आप आध्यात्मिक प्रवेग प्राप्त नही कर पाते है। दवाइयों के सेवन के साथ भी ठीक यही बात है। यदि आप चिकित्सक के निर्देशानुसार प्रति दिन दवाइयां लेते हैं, तो उनका प्रभाव होता है। यदि आप कई गोलिया आज ले ले फिर अगले कुछ दिनो तक कुछ दवाई नही ले। पुनः एक

ही दिन मे कई दिनो की खुराक खा ले तो आप निरोग नही हो सकेगे। इसलिए प्रति दिन कुछ न कुछ प्रयास अवश्य होना चाहिए। यह क्रम निरन्तर बना रहे। योग अध्ययन मे निरन्तर सलग्नता अत्यन्त महत्वपूर्ण है। साधक होने के नाते आप अपने लक्ष्य के साथ निरन्तर लगे रहे और आनन्द का अनुलाभ करे। परन्तु बहुत अधिक जोश में आना हानिकारक हो सकता है। अपनी साधना में लगे हुए स्वयं को सयमित रखें तथा अपनी ाधना मे अधिक से अधिक आनन्द प्राप्त करने का प्रयास करे।

अनन्त खोज की भावना

ऐसा व्यक्तित्व विकसित कीजिए जो यह अनुभव करे कि आप नवीन और गुह्य रहस्यो की खोज कर रहे है। योग मे जो भी आपने उपलब्धि की है उससे बहुत अधिक संतुष्ट नही होइए। आपने बहुत अधिक ध्यानाभ्यास, सद्ग्रन्थो का अध्ययन तथा सद्गुणों का विकास कर लिया है यह सोचकर सतुष्ट नही हो जाइये। मन मे यह धारणा कभी नहीं लाइए कि आध्यात्मिक मार्ग पर जो कुछ भी किया जा सकता है वह सब आपने कर लिया है। यह एक भयानक भूल है। चाहे आप योग के विद्यार्थी हैं, अथवा किसी कालेज या स्कूल के। आप में किसी भी क्षेत्र में कुछ नई खोज और उपलब्धि करने की निरन्तर जिज्ञासा बनी रहनी चाहिए। ज्ञान-प्राप्ति की एक अतृप्त पिपासा आपके हृदय मे अवश्य बनी रहनी चाहिए। इसे ही स्वर्गिक यौवन कहा गया है।

यदि आपका सूक्ष्म शरीर ज्ञान प्राप्त करने के लिए उत्सुक और सवेदनशील रहता है, तो यह चिरयुवा स्थिति प्राप्त कर लेता है। जब आप ज्ञान प्राप्ति के लिए असुग्राही होकर यह अनुभव करने लगते है कि जो ज्ञान प्राप्त करना था आप कर चुके है, तो आपने सूक्ष्म रूप से वृद्धावस्था प्राप्त कर ली है। इसलिए शारीरिक दृष्टिकोण से कोई भले ही युवा दिखाई पडता हो, परन्तु उसमे ज्ञान प्राप्ति की यदि जिज्ञासा समाप्त हो गई है तो मानसिक और सूक्ष्म दृष्टिकोण से वह वृद्ध है।

भले ही वह शारीरिक दृष्टि से युवा हो सकता है। जिज्ञासु बनकर आप पहले से भी अधिक युवा हो सकते हैं। जीवात्मा के शरीर से निकलने तक कोई व्यक्ति सूक्ष्म रूप में युवा बना रह सकता है। अभ्यास बनाये रखने के पीछे यही उद्देश्य है।

इसके विपरीत अपने मन के समक्ष आपको कोई समय की सीमा निश्चित नही करनी चाहिए। चार माह तक यदि योगाभ्यास से कोई लाभ दिखाई नही पडता तो इसे छोड देने की धारणा गलत है। आप को यह अच्छी तरह जान लेना आवश्यक है कि आध्यात्मिक गतिविधिया आपके व्यक्तित्व को समन्वित रूप से विकसित करने की एक सूक्ष्म प्रक्रिया है जो समय पर नहीं निर्भर करती। थोड़ी सफलता भी आपको ऐसा आनन्द दे सकती है जिसका आपने कभी अनुभव नहीं किया है।

तपस्वी और भक्त

एक कथा मे दो प्रकार के साधकों के विषय मे बताया गया है। एक भक्त था जो पंचाग्नि सेवन जैसा कठिन तप किया करता था। चिलचिलाती धूप में वह अपने चारो ओर अग्नि प्रज्वलित करके असह्य ताप सहा करता था। उस तपस्वी को यह विश्वास था कि यदि कुछ समय तक वह ऐसा करता रहा तो अपने इष्ट देव को प्रसन्न कर कुछ सिद्धियां प्राप्त कर लेगा। एक दिन महर्षि नारद उसके पास आये और कहा–"मैं भगवान विष्णु के पास जा रहा हूँ। क्या तुम्हें उनको देने के लिए कोई संदेश है? यदि कुछ कहना चाहते हो तो कहो। मैं भगवान विष्णु तक तुम्हारी बातें पहुँचा दूँगा।" तपस्वी ने कहा–"निश्चित रूप से मुझे कहना है। कृपया आप भगवान से पूछें कि मैं बहुत दिनों से कठिन तप कर रहा हूँ उनके दर्शन के लिए और कितने दिनों तक तपस्या करनी होगी?" नारद उसके सदेशो को लेकर आगे चले। कुछ दूर जाने पर उन्हें पेड़ की छाया में विश्राम करता हुआ एक भक्त मिला जो किसी भी प्रकार का कोई तप नहीं कर रहा था। वह कभी–कभी भगवान के

नाम और लीलाओं का कीर्तन कर लेता था और जी आने पर भाव विभोर होकर प्रभु की स्मृति में नृत्य भी करने लगता था। नारद जी ने उससे कहा–"भक्त, मैं बैकुण्ठ धाम जा रहा हूँ। क्या तुम्हें प्रभु से कोई बात कहनी है?" भक्त ने प्रसन्नता पूर्वक कहा–"भगवन, आप कृपा करके प्रभु से यह पूछ ले कि उनके दर्शन कब होंगे?" उसका संदेश लेकर नारद जी बैकुण्ठ धाम की ओर प्रस्थान कर गये। कुछ दिनों के बाद नारद जी ने वापसी यात्रा मे तपस्वी के पास जाकर भगवान का संदेश दिया। उन्होंने कहा "प्रभु का सदेश है कि ऐसी ही तपस्या यदि तुम प्रतिदिन पॉच वर्षों तक करते रहे तो मेरे दर्शन प्राप्त कर सकोगे।" ऐसा सुनते ही तपस्वी निराश हो गया और पंचाग्नि से बाहर कूद कर चिल्ला–चिल्लाकर कहने लगा–"मैं और पांच वर्षों तक यह असह्य ताप नहीं सह सकता। बहुत हो गया। मैं अब और अधिक अपने आपको पीड़ित नहीं करूंगा। एक–एक दिन निकालना कठिन है। मै पांच वर्ष की लम्बी अवधि कैसे व्यतीत कर सकता हूँ?"

नारद जी ·, वृक्ष के नीचे लेटे हुए भक्त के पास जाकर भगवान का संदेश सुनाया। नारद जी बोले–"क्या तुम इस पेड़ के ऊपर जितनी पत्तियाँ हैं उन्हें देख रहे हो? तुम्हें विष्णु भगवान के दर्शन के लिए उतने ही वर्षों तक ऐसी ही भक्ति करनी होगी जितनी इस वृक्ष की पत्तियॉ हैं।" यह संदेश सुनते ही भक्त यह सोचकर प्रसन्नता से नाच उठा कि " एक–न–एक दिन प्रभु आयेंगे और मैं उनका दर्शन पा सकूंगा। वह दिन कितना अद्‌भुत होगा।" कहा यह जाता है कि जिस पल भक्त के मन में ऐसी खुशी और उत्साह उत्पन्न हुआ भगवान विष्णु उसी पल प्रकट हो गये। उसे दर्शन देने में उन्होंने क्षण भर का भी बिलम्ब नहीं किया। उसे कोई प्रतीक्षा नहीं करनी पडी।

राजाओं के भी राजा बने

जो व्यक्ति बहुत सारी धन सम्पत्ति एकत्र करना चाहते है उन्हें तब अत्यन्त प्रसन्नता होती है जब उनके पास धन सम्पत्ति का बहुत बड़ा संग्रह हो जाता है। कल्पना कीजिए कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को प्राप्त करने के बाद व्यक्ति को कितना आनन्द आयेगा। जब आप ब्रह्माण्डीय चेतना विकसित कर लेते हैं, जब आप सार्वभौमिक सत्ता के साथ एकत्व स्थापित कर लेते हैं तब आप सचमुच में राजाओं के भी राजा बन जायेगे। आप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर शासन करने लगेंगे। मुक्ति का अर्थ यही है। आपके जीवन का एक मात्र उद्देश्य ईश्वर साक्षात्कार करना है। "मै लक्ष्य को अवश्य प्राप्त करूँगा।" यह दृढ़ प्रतिज्ञा कीजिए और इस भाव के साथ आगे बढ़ते चलिए कि चाहे कितनी भी बाधायें क्यों न आये, चाहे कितना भी समय क्यों न लगे हम लक्ष्य को प्राप्त करके ही विश्राम लेंगे। माया के दल–दल तथा ऋणात्मक कर्मो की नदियां पार करते हुये अज्ञान के ॲधियारे से संघर्ष कर आप निश्चित रूप से दिव्यता की भव्य उॅचाई पर आसीन हो परमानन्द में प्रतिष्ठित होंगे।





स्वामी ज्योतिर्मयानन्द

५

त·ाव से ़ाक्ति

सकारात्मक सोच विकसित करने के लिए ऐसी मनः स्थिति बनाये रखने की आवश्यकता है जो सभी प्रकार के तनावों से मुक्त हो। तनाव, चिन्ता, भय, आशंका और कुछ अनिष्ट होने की सभावना से व्यक्ति का मन निरन्तर एक दबाव मे रहता है। यदि आपके भन में इन सबो का प्रवेश हो जाता है तो आप सकारात्मक चिन्तन नही कर सकेगे। मन को इन सभी दवाबों से मुक्त होकर पूरी तरह शिथिल रहना चाहिए। इसी से सम्बधित महाभारत की एक कथा है

चिन्ता करने वाला वृक्ष

किसी जगल मे एक विशाल वृक्ष था। उसकी कई डालियां थी जिनपर असंख्य सुन्दर–सुन्दर पत्ते लगे थे। पूरे जगल में यह वृक्ष सबसे स्वस्थ एव भव्य था। वन के अन्य सभी वृक्ष उसकी प्रसशा करते तथा अत्यन्त सम्मान दिया करते थे। परिणामत· इस वृक्ष को अभिमान हो गया। जब इसकी विशाल डालिया हवा मे झूमने लगती तो यह वृक्ष जोर–जोर से अभिमान पूर्वक कहने लगता–"मै विश्व का सबसे ऊँचा वृक्ष हूँ। वायु देवता भी मुझसे भयभीत रहते हैं। वे मेरा कुछ भी अनिष्ट नही कर सकते।" थोडे ही दिनों में यह बात जंगल मे फैल गई। कानो·कान

अभिमानी वृक्ष की यह घोषणा एक दिन वायु देवता तक पहुँची। वायुदेव को जब यह ज्ञात हुआ कि जंगल का कोई वृक्ष अपने को उन से भी अधिक शक्तिशाली होने की घोषणा कर रहा है तो उन्होने कहा—"मैं वृक्ष का गर्व चूर करूँगा। कल जैसे ही सूर्य की पहली किरण उस वृक्ष पर पडेगी वैसे ही मै पूरी शक्ति और अपने सहायकों साथ उस पर आक्रमण करूँगा।"

पुन एक दूसरे के कानो से होती हुई यह बात शीघ्र ही अभिमानी वृक्ष तक पहुँच गई। जब वायु देवता के आक्रमण की बात उस वृक्ष को ज्ञात हुई तो वह बहुत अधिक भयभीत हो गया। वह पूरी रात भय से इस प्रकार कांपता रहा जिससे उसकी सभी पत्तियां झड गई। वह इतना दु.खी और उदास हो गया कि उसकी कई विशाल डालियां टूट—टूटकर नीचे गिर गई। प्राप्तः काल होते— होते वह वृक्ष दु ख, चिन्ता और भय की एक जीवन्त प्रतिमूर्ति बन गया।

जंगल को झंकझोरते हुए वायुदेव जब उस वृक्ष के पास आये तो उस की दशा देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा—"हे वृक्ष मैने कभी भी तुम्हारी ऐसी दशा करने की नही सोची थी। मै तो केवल हिला डुलाकर तुम्हारी कुछ शाखाओं को गिराना चाहता था। परन्तु तुमने अपनी ऐसी बुरी दुर्दशा स्वयं बना ली है। तुम्हे ऐसी स्थिति मे लाने का मेरा कोई इरादा नही था"।

इस कथा का सदेश यह है कि मानव मन उस दु.खद स्थिति की कल्पना करने मे प्रवीण है जो आई नहीं है। यदि आप किसी दुःख की कल्पना कर उसका पूर्वाभ्यास करते हैं तो उसकी गंभीरता को सैंकड़ों गुणा बढा देते है। वास्तवितक दु:ख इससे बहुत कम हुआ करता है। जैसा आपका मन कल्पना करता है वास्तविक परिस्थितियॉ वैसी दुःखद नही होती। आप यदि अपने जीवन की घटनाओ का विश्लेषण करें तो पायेंगे कि आपने कितनी बार व्यर्थ की कल्पना मे ही असह्य दुःख एवं वेदनाओं को सहा है। वास्तव में ऐसी बाते हुई नही। आपने कल्पना कर ली कि परिस्थितिया बुरी होगी, परन्तु, वैसा हुआ नहीं। ऐसी कल्पना

से आपका मन एक दो बार नही, बल्कि हजारों बार दुःखी हुआ है और यह क्रिया अब भी चलती है।

यह संसार एक दिव्य योजना है

इस प्रकार की बुरी कल्पना से बचने के लिए आपको इस तथ्य मे गहरी अन्तर्दृष्टि उत्पन्न करनी होगी कि यह संसार एक दिव्य ईश्वरीय योजना है! आपने न तो इस सृष्टि की रचना की है न ही अपने शरीर की। सर्व श्रेष्ठ क्या है इस सत्य की जानकारी केवल सृष्टिकर्ता को ही है। यद्यपि जीवन की कुछ परिस्थितिया और घटनायें कष्टदाई और दुःखद प्रतीत होती है, फिर भी आपको यह विश्वास रखना चाहिए कि उनके पीछे भी कोई न कोई उद्देश्य है। आपको इस बात की स्पष्ट समझ और अटूट अविश्वास होना चाहिए कि कुछ भी गलत नही हो सकता। यह संसार दिव्य बुद्धिमत्ता तथा अत्यन्त करुणामय हाथो से निर्मित है। इसमे किसी व्यक्ति अथवा जीवात्मा के प्रति वैरभाव नही रखा गया है। इसके विपरीत यह सभी जीवो के विकास तथा उन्नति के लिए उसके अनुकूल बनाया गया है। इसलिए जीवन की वाह्य परिस्थिति चाहे जैसी भी क्यों न हो उसकी पृष्ठभूमि में कोई न कोई दिव्य ईश्वरीय उद्देश्य है। यदि यह विश्वास दृढ़ता पूर्वक आपके मन में प्रतिष्ठित हो जाता है तो आप अपनी ऋणात्मक परिकल्पनाओ को समाप्त कर यह अनुभव करने लगते है कि कुछ भी गलत नही हो सकता।

आप अमर आत्मन् है

बुरी से बुरी परिस्थिति भी आपको अपने आत्मिक स्वरूप से पृथक नहीं कर सकती। आप शरीर नहीं बल्कि आत्मा है जो विनष्ट नही हो सकता। आपके शरीर को अनेक प्रकार के कष्ट हो सकता है। इसकी मृत्यु भी होती है। परन्तु आपकी आत्मा पूर्वत बनी रहती है। भगवान

श्री कृष्ण के शब्दों मे –"अग्नि इसे जला नहीं सकती, जल इसे डुबा नहीं सकता, तलवार इसे काट नहीं सकती, वायु इसे उडा नही सकती। यह आत्मा तूफानो मे उड नही सकती और न ही किसी प्रकार विनष्ट की जा सकती है। यह अनन्त एव अमर आत्मा है।" आपको ऐसा विश्वास अपने अन्दर उत्पन्न करना है।

आत्म प्रयास और ईश्वर समर्पण दोनों साथ-साथ हो

आत्मा वस्तुतः दिव्य है तथा आप ब्रह्मन हैं। इन दोनों तथ्यो की अनुभूति के अन्तराल मे एक ऐसी अवस्था आती है जब व्यक्ति परमेश्वर के प्रति भक्ति विकसित करता है। ईश्वर आपके हृदय में स्थित आपका स्वामी है। आपका जीवन ईश्वरेच्छा पर निर्भर है। वह आपके जीवन का आधार और पोषक है। समर्पण की यह भावना साधक को विकसित करनी चाहिए। ईश्वर समर्पण का यह अर्थ नहीं कि आप पुरुषार्थ करना त्याग दें। इसके विपरीत ईश्वर समर्पण का भाव एक ऐसा शक्ति स्रोत है जिसकी सहायता से आप पुरुषार्थ करने में सफल हो पाते हैं। कुछ लोग कहते है–"मैने तो स्वय को पूरी तरह से परमात्मा के चरणों में अर्पित कर दिया है। उसे ही सब कुछ करने दीजिए। मुझे कुछ करने की आवश्यकता नहीं।" सच्चे अर्थो में यह ईश्वर समर्पण नही है।

परमात्मा ने मन, बुद्धि, शरीर, इन्द्रियां और आन्तरिक स्वतत्रता का जो अनुदान दिया है उसको सर्वाधिक एवं सर्वोत्तम रूप से व्यवहार में लाकर ही आप सही समर्पण कर सकते हैं। यदि परमात्मा द्वारा प्रदत्त कर्त्तव्यों का पालन अपनी पूरी शक्ति, प्रतिभा और क्षमता से करते है और अपने कर्मो के फल को परमात्मा के हाथों में छोड देते हैं तो आप सच्चे अर्थो मे समर्पित हैं। इसके विपरीत यदि आप समर्पण के नाम पर अपने पुरुषार्थ को त्याग कर आलस्य में पडे रहते हैं तो आप भयंकर भूल कर रहे हैं।

जब आप भूखे होते है तो यह नहीं कहा करते–''मैं चुपचाप ईश्वर के प्रति समर्पित हो जाऊँगा। भोजन अपने आप उछलता हुआ हमारे मुख में आ जाएगा।'' परन्तु जब आपका पेट भरा होता है तो आप निष्क्रिय बैठकर व्यर्थ निश्चय करने लगते हैं–''मैं कुछ भी करने नही जा रहा हूँ। यदि ईश्वर चाहेगा तो परिस्थितियां ही परिवर्तित हो जायेंगी।'' यह धारणा पूरी तरह गलत और भ्रामक है। ईश्वर समर्पण विकसित करने के लिए व्यावहारिक जीवन में जो भी संभव है उन कार्यो को अपनी पूरी योग्यता और क्षमता से करना पड़ता है। आप को धैर्य भी रखना है। समर्पण की भावना धीरे–धीरे विकसित होती है। यह कोई भावनात्मक स्थिति नही हैं। ईश्वर समर्पण की भावना जब आपके मन में दृढ़ होती जायेगी तब आप किसी भावी विपत्ति अथवा कष्ट की कल्पना से स्वयं को असह्य दुःख, चिन्ता, भय और निराशा के निरर्थक दबाव से बोझिल नहीं करेंगे। आपका मन जब इनके दबावों से मुक्त रहता है तब आप पहले से अधिक बुद्धिमान, सृजनात्मक और गतिशील हो जातें है। परिणामत: आप अधिक कुशलता एवं कार्यदक्षता से अपने सभी दायित्वों को पूरा करने लगते हैं। आप इस दिशा में जितनी प्रगति करते जाते हैं आपकी उतनी चित्त शुद्धि होती है। जब आपका पुरुषार्थ बढ जाता है तो आपको और अधिक दक्षता तथा प्रवीणता प्राप्त हो जाती है आत्मप्रयास और ईश्वर समर्पण दोनों परस्पर संम्बधित हैं। परन्तु आपका प्रयास एक कुशल मार्गदर्शक की देख–रेख में होना चाहिए। योग दर्शन का जब आप गहराई से अध्ययन करेंगे तो दैनिक जीवन में कैसे पुरुषार्थ करना चाहिए और आपका व्यक्तित्व कैसे संतुलित रह सकता है इस का ज्ञान हो जायगा।

परमात्मा के हाथों में सब कुछ सौपकर निश्चिन्त बनिए

जप,ध्यान, सत्संग इत्यादि योग साधनाओं के साथ–साथ ईश्वरीय कृपा में विश्वास करते हुए स्वयं को तनाव रहित कीजिए। शान्त मन

मे ही सकारात्मक विचार उठा करते है। विश्रान्ति की अवस्था बादल रहित आकाश के सदृश है। आपके सकारात्मक विचार मन के मुक्ताकाश में हंस की तरह–विहार करते है। जब ऐसा होने लगता है तो आपका मन स्वर्गिक आनन्द से परिपूर्ण हो जाता और आपकी आत्मा परमात्मा के साथ एकत्व बना लेती है।



६

चिन्तित होने की आदत पर विजय पाइए

चिन्तित होने की आदत सकारात्मक सोच के विकास मे अवरोध है। साधक को इस आदत से मुक्त होने के लिए कोई न–कोई रास्ता अवश्य निकालना चाहिये। सबसे पहले आप को यह जान लेना आवश्यक है कि जिन चीजों के लिए आप चिन्तित हो रहे है, वे वास्तव में चिन्ता करने योग्य नहीं हैं। आपकी चिन्ता का कोई वास्तविक आधार नही है। चिन्ता करने की आदत गहन चिन्तन और जीवन कला के प्रति समझ के अभाव में उत्पन्न होती है। यदि आप अपने आस पास के लोगो का सूक्ष्म अध्ययन करेगे तो आपको ज्ञात होगा कि लोग व्यर्थ ही छोटी–छोटी बातो के लिए चिन्ता किया करते है।

यदि कोई व्यक्ति देखने में सुन्दर है तो वह जब अपने से अधिक किसी दूसरे सुन्दर व्यक्ति को देखता है, तो चिन्तित हो जाता है। वह अपनी सुन्दरता बनाये रखने की चिन्ता मे खोया रहता है। धनी व्यक्ति अपनी प्रभुता और शक्ति बढाने के लिए चिन्तित रहते हैं। चिन्तित होने की आदत की जड अधिकाश व्यक्तियो मे बहुत गहराई तक जमी होती है।

हृदय में स्थित परमात्मा के चरणों में समर्पित होइए

चिन्ता की इस आदत को आप अपने हृदय में स्थितपरमात्मा के प्रति पूर्ण समर्पण तथा इस भावना को प्रबल बनाकर दूर कर सकते हैं कि जीवन की प्रत्येक घटना का कुछ–न–कुछ उद्देश्य है। इसलिए उनका अपना महत्व है। अतः उन्हे सहज भाव से स्वीकार करना चाहिए।

जब आप परमात्मा के चरणों में स्वयं को समर्पित कर देते हैं, तो आप जीवन की प्रत्येक स्थिति के साथ सामंजस्य और अनुकूलनशीलता बनाने लगते हैं। इस प्रकार आप वाह्य परिस्थितियो के साथ ताल मेल बैठाने के बदले, अपनी सभी परिसीमाओ से ऊपर एक भावातीत दृष्टि से उनके अनुरूप स्वय को ढ़ाल लेते है। इस बात को समझना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

कोई व्यक्ति वाह्य रूप से विषम परिस्थितियों से घिरा हो सकता है। उसे गरीबी का सामना करना पड सकता है, अथवा उसकी छत टूटी हो सकती है, फिर भी वह चिन्ता रहित और प्रसन्न रह सकता है। वह समस्त विषमताओं और कठिनाइयों को स्वीकार कर लेता है। किसी को एक हाथ अथवा एक आख होने के बाद भी वह खुशी एवं मस्ती मे गीत गाता रह सकता है। ऐसे व्यक्ति जीवन की वास्तविकताओं को स्वीकार कर लेते हैं। इसके विपरीत दो हाथ, पैर और आंखों वाला स्वस्थ व्यक्ति जो कुछ भी उसके पास है, उसकी अवहेलना कर जो नहीं है उसके लिए दुःखी और चिन्तातुर रहता है।

इसलिए आपकी परिस्थिति जैसी है उसकी स्वाभाविक एवं सहज स्वीकृति आपको आगे ले जाने का मार्ग प्रशस्त करती है। यह स्वीकृति तब सहज और स्वाभाविक हो जाती है जब आप इस दार्शनिक सत्य की अनुभूति कर लेते हैं, कि जीवन की प्रत्येक घटना एवं परिस्थिति आपके आध्यात्मिक विकास के अनुकूल है। परमात्मा सर्वव्यापक है। इस संसार का नियंत्रण ईश्वरीय हाथों में है। जब आप ईश्वरीय

कियाशीलता मे विश्वास करते है, तो एक ऐसे मन का विकास कर लेते है, जो चिन्ता रहित होता है।

अचिन्त्य वस्तुओं के लिए आप चिन्तित हैं

चिन्ता को दूर करना दर्शन का प्रमुख विषय है। भगवान श्रीकृष्ण गीता में अर्जुन को उपदेश देने का आरंभ इस घोषणा से करते हैं--"अशोच्यानानव शोचस्त्वम् –जिसका अभिप्राय है–"तुम ऐसी चीजों की चिन्ता कर रहे हो जो चिन्ता करने योग्य है ही नही।" पुन' अपने उपदेश के अन्तिम चरण में वे कहते है–":मा शुच." अर्थात 'चिन्ता नहीं करो'। जब आप भगवान श्रीकृष्ण की शिक्षा के आरंभ और अन्त दोनों को एक साथ रखेंगे तो उसका यही अर्थ निकता है–"तुम ऐसी चीजों के लिए चिन्तित हो जो चिन्ता करने योग्य है ही नहीं। इसलिए चिन्ता नहीं करो।" इस गहन दार्शनिक उपदेश का यही सार है। आपकी समस्त चिन्तायें अज्ञान के कारण हैं।

ईश्वर के साथ आसक्ति विकसित कीजिए

जैसे–जैसे आप अपने अन्तर्निष्ठ परमात्मा में विश्वास उत्पन्न करते जायेंगे आपको ईश्वर से एकत्व और अपनापन का अनुभव होने लगेगा। ईश्वरीय लगाव सासारिक आसक्ति से भिन्न हुआ करता है। आपको भौतिक वस्तुओं से आसक्ति हो जाती है तो आप आरभ मे जब बहुत सारी चीजों की कामना करते है उस समय आपको अत्यधिक आनन्द आता है। परन्तु समय व्यतीत होने के साथ–साथ जब आसक्ति और दृढ हो जाती है, तब उन वस्तुओं में दिखाई पड़ने वाला आनन्द कमश· कम होने लगता है।

इसके विपरीत परमात्मा से अपनत्व विकसित करते समय आरंभिक अवस्था में आपको कोई आनन्द नहीं प्राप्त हो सकता। क्योकि,

आपको अपने मन के विरुद्ध अनेक प्रकार की साधना करनी पडती है। परन्तु ज्योही आपको अपनी ही अन्तरात्मा में ईश्वरीय आनन्द की हल्की झलक मिल जाती है, तो ईश्वर भक्ति स्वत बढ़ने लगती है। यह सर्वोच्च प्रकार की आसक्ति ही है।

भौतिक वस्तुओ से आसक्ति का आधार लोभ और अज्ञान है। इसके कारण सुख और आनन्द क्रमश कम होता जाता है। जैसे--जैसे आनन्द में कमी आती है, आप विविध प्रकार के बन्धन मे जकडते जाते हैं। इसके विपरीत परमात्मा से आसक्ति के कारण उतरोत्तर आनन्द और सुख प्राप्त होता है। अतः इसे उत्सुकतापूर्वक विकसित करने का प्रयास करना चाहिए। इस तथ्य को अच्छी तरह समझ लीजिए कि यह ससार एक दिव्य ईश्वरीय योजना के अन्तर्गत नियत्रित होता है। आप जो भी हैं, जैसा दिखाई पड रहे हैं, और जैसी परिस्थितियों से घिरे है, उन सबो का आपकी आत्मा के विकास के लिए एक निश्चित महत्व और उद्देश्य है। इसलिए अपनी परिस्थिति के प्रति निराश और खीझ उत्पन्न करने के बदले उनसे लाभ उठाइये। चिन्ता करना समय को व्यर्थ गॅवाना है। यदि चिन्ता करना स्वाभाविक और व्यावहारिक भी प्रतीत हो तो साधक को कभी चिन्तित नही होना चाहिए। इसके बदले उसे निश्चिन्तता और मुदिता जैसे गुण विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

दिव्य योजना के रहस्यों पर चिन्तन कीजिए

जब भी आपके मन मे कोई चिन्ता प्रवेश करे तब आप ईश्वरीय योजना पर चिन्तन आरभ कर दीजिए। अपने आस--पास की चीजो के विषय मे सोचिए। चिन्ता रहित होकर कैसे पुष्प खिलते है। चिडिया कैसे अनन्त आकाश मे उडती हुई अपना आहार प्राप्त करती हैं? ससार के असख्य जीवो की कौन देख रेख करता है? जब आपको सोचने और निर्णय लेने की शक्ति नहीं थी उस बाल्यावस्था मे आपकी देख-रेख कैसे हुई ? उस समय क्यो इससे भी अधिक तत्परता और लाड--प्यार

से आपका पालन पोषण किया गया? क्या जिस ईश्वरीय कृपा से पहले आपकी देख--रेख हुई है, वह आज नहीं विद्यमान है? दिव्य ईश्वरीय योजना पर गहराई से चिन्तन करने से आप सुख, शान्ति, आनन्द और सामजस्य के भाव से भर जायेंगे।

आप आज यह अनुभव नहीं कर रहे है कि जिस लाड़--प्यार से आपकी देख--रेख बाल्यावस्था में की गई है, वही ईश्वरीय व्यवस्था आज भी आप की देख--रेख और सुरक्षा प्रदान कर रही है। बड़े हो जाने के बाद वही ईश्वरीय कृपा आपको आज भी पोषित कर रही है। ईश्वरीय कृपा निरन्तर बनी रहती है। जब आप उन सबो पर चिन्तन करेंगे तो निश्चित रूप से आपका मन तनाव रहित और निश्चिन्त बन जायेगा। विश्राान्ति से भावातीत की प्राप्ति जब आपका मन निश्चिन्त और पूर्ण विश्रान्ति की अवस्था में रहता है तब आप विकास के अगले सोपानों पर चढते जाते हैं। आपकी शक्ति सरक्षित होती है। विकसित होने की प्रकिया में आप अपनी परिसीमा, जाग्रत, स्वप्न एवं सुषुप्ति की अवस्था, स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण अस्तित्व, मन, बुद्धि, चित्त एवं अहकार से ऊपर होने लगते हैं। आपके समक्ष एक मात्र लक्ष्य इन सबों से मुक्त होकर अहम् ब्रह्मास्मि की अनुभूति करना है।

आत्मसाक्षात्कार की अवस्था में सभी चिन्तायें और तनाव समाप्त हो जाते हैं। जब तक आप इस स्थिति को प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक आपका कर्तव्य है कि चिन्ता रहित रहते हुए मन में सात्विक सस्कारों को बढ़ायें। अपने मन में इस विचार को दृढ़ करें कि परमेश्वर आपके अन्दर विद्यमान है तथा विकास और उन्नति की अनन्त संभावनायें आप के समक्ष हैं। ईश्वरीय कृपा से कुछ भी प्राप्त करना आपके लिए असभव नहीं है। सफलता अहंकार से नहीं प्राप्त होती। जब आप अहंकार को समाप्त कर देते हैं, तो आत्मा की स्वाभाविक भव्यता और शक्ति का अनुभव होता है। आपका जीवन सभी दु:खों से रहित होकर परमानन्द में गोता लगाने लगता है। ऐसा जीवन व्यतीत करना ही प्रत्येक व्यक्ति का लक्ष्य है। जैसे ही आपका जीवन इस प्रकार व्यतीत होने लगेगा आप

अपने चतुर्दिक सुख, शान्ति और सामजस्य प्रसारित करने लगेगे।

इसलिए जब आप इन बातों पर विचार करे तो चिन्तित होने की आदत समाप्त करने का भी प्रयास करें। यदि आप ऐसा नहीं कर सकेगे तो आपके समक्ष असख्य दुःख और निराशाये आती रहेंगी। आप जहॉ भी जायेगे वहा आपको चिन्तित करने वाला कोई न कोई कारण अवश्य मिल जायेगा। इसके विपरीत चिन्ता और दु.ख के विषय मे जब आपको वास्तविक अन्तर्दृष्टि प्राप्त हो जायेगी और आप सकरात्मक सोच विकसित कर लेंगे तो आप कितनी भी विषम परिस्थिति में क्यो न रहे निरन्तर परमात्मा का कृपालु हाथ आपको सरक्षण देता हुआ दिखाई पडेगा।



७

सकारात्मक सोच का लक्ष्य

ब्रह्माकार वृत्ति अर्थात् मन को परम ब्रह्म परमेश्वर की स्मृति में लगाये रखना। यही सर्वोच्च प्रकार का सकारात्मक चिन्तन है। मन को ईश्वरोन्मुख करना ही सर्वश्रेष्ठ वृत्ति है। धनात्मक विचारों का लक्ष्य परमात्मा है। यदि आप अपने मन को धनात्मक चिन्तन के लिए प्रशिक्षित कर रहे हैं और आपके समक्ष आत्मसाक्षात्कार का लक्ष्य नहीं है, तो सकारात्मक सोच विकसित करने का आपका प्रयास असफल हो जाएगा। अहंकार ही सभी समस्याओ की जड़ है, क्योंकि यह जीवात्मा और परमात्मा के मध्य अवरोध उत्पन्न करता है। जो लोग आध्यात्मिक रूप से प्रबुद्ध नहीं हैं, या जिनका जीवन आध्यात्मिक दर्शन पर आधारित नहीं है, वे अहंकारिक कर्मो के जाल मे ही बुरी तरह उलझे रहते हैं। उनके शब्दकोश का दो अत्यन्त महत्वपूर्ण शब्द 'मैं' और 'मेरा' है। वे जो भी कार्य करते हैं, उनके पीछे मुख्य बात यह है कि "इस कार्य से मैं क्या प्राप्त करुँगा तथा इससे कौन लाभान्वित होगा?" ऐसे व्यक्ति अपने अन्दर वर्तमान तुच्छ 'मैं' अथवा इससे सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए ही कार्य करते हैं। इसके बाहर की दुनिया से उन्हें कुछ लेना-देना नहीं। वे किसी अन्य की कोई चिन्ता नही करते। परन्तु, आध्यात्मिक स्वतंत्रता का जो वास्तविक संसार है वह 'मै' और 'मेरा' से सर्वथा ऊपर है। वास्तविक

संसार तो आत्मिक है। यह विस्तार और स्वतंत्रता का संसार है। समृद्ध आध्यात्मिक जीवन का रहस्य स्वयं को अहकेन्द्र से ऊपर उठाना है जिससे आप परमात्मा के केन्द्र मे स्थित हो सकें। ज्ञान तथा भक्ति के अभ्यास से इसको दैनिक क्रियाओं में लाने का प्रयास करना चाहिए।

ज्ञान और भक्ति से अहंकार की समाप्ति

अपने तथा दूसरों में यदि आप परमात्मा को विद्यमान देखते हैं, तथा अपनी आत्मा से निर्देश ग्रहण करते हैं, तो आप उच्च कोटि की साधना कर रहे हैं। इस व्यवहारिक साधना से आप शीघ्र ही अपने अहंकार को समाप्त कर देंगे। भक्ति योग में यही साधना प्रमुख है। भक्ति तथा ज्ञान योग दोनों साथ–साथ चलते हैं। सवेदना और भावना का पथ भक्तियोग है, जबकि ज्ञानयोग विवेक और बुद्धि का मार्ग है। मानव व्यक्तित्व विवेक और भाव के तार से बुना गया है। भक्ति पथ पर जब आप प्रगति करते है तो ऐसी शक्ति उत्पन्न कर लेते हैं जिसमें आपको यह अनुभव होता है कि ईश्वर आपके जीवन का पथ निर्देशित कर रहे हैं। परमात्मा ही एक मात्र वास्तविकता है और आपके अस्तित्व का लक्ष्य मानवता में विद्यमान परमात्मा की सेवा करना है। आप यह अनुभव करना आरंभ कर देते है कि आपका जीवन केवल 'मैं' और 'मेरा' तक ही सीमित रहने के लिये नहीं बना है बल्कि, प्रत्येक प्राणी मे विद्यमान परमात्मा के चरणों में इस 'मैं' और 'मेरापन' की भावना को समर्पित करने के लिए ही आप जी रहे हैं।

इस प्रकार की दृष्टि विकसित करने में उपनिषद आपकी सहायता करते हैं। इनके अध्ययन से आपको इस तथ्य की अनुभूति होती है कि आपके अन्दर जो अहकार है वह वास्तविक नहीं है।

अहंकार के लिए जो कुछ भी आप कर रहे हैं, वह व्यर्थ है, क्योंकि अहंकार स्वयं एक भ्रम तथा परिवर्तनशील केन्द्र है। आज आपका अहंकार जो चाहता है कुछ वर्षो के बाद उसकी यह चाह या तो कम हो जाएगी

या पूरी तरह समाप्त भी हो सकती है। किसी अज्ञात घटना अथवा अप्रत्याशित कारण से जब कोई हानि हो जाती और आपका अहंकार दुःखी हो.जाता है, तो वास्तव मे यह आपकी हानि नहीं है। क्योकि आप अहकार नही है। इसी प्रकार अनुकूल घटना अथवा परिस्थितियों के कारण यदि आपका अहकार प्रसन्न होता है तो यह आपकी उपलब्धि भी नही है, क्योंकि आप अहकार नहीं है। इस तथ्य को समझने के लिए एक उदाहरण दे रहा हूँ।

मरकट रूपीअहंकार की कथा

किसी के पास एक पालतू बन्दर था। बन्दर घर का सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण चीज बन गया था। इस के स्वामी के जीवन का एक मात्र उद्देश्य उस बन्दर को प्रसन्न रखना बन गया। धीरे–धीरे वह यह अनुभव करने लगा कि उसका अपना कोई निजी अस्तित्व नही रहा। सुबह से शाम तक वह बंदर की ओर देखता रहता और उसकी इच्छानुसार ही कार्य करता था। यद्यपि बन्दर का स्वामी उसको बहुत प्यार करता था। फिर भी वह बन्दर कभी पूरी तरह से न तो संतुष्ट होता और नही खुश रहता। कभी–कभी तो वह बहुत गुस्से में आ जाता और कभी शान्त होकर चुपचाप बैठ जाता। इस प्रकार बन्दर के स्वामी का जीवन बहुत व्यग्रता और परेशानियों से भर गया।

एक दिन उसने स्थिति का ठीक–ठीक विश्लेषण किया। "क्या मै इस घर का स्वामी नहीं हूँ?" उसने सोचा "यह बन्दर मेरा कौन है? जब तक यह हमारा पालतू जानवर बन कर रहता है, मै इसे बाहर नही करूँगा। परन्तु इसके पीछे मैं अपना सुख चैन क्यो खोया करूं ?" ऐसा निर्णय लेकर उसने बन्दर को उचित जगह पर बांध दिया और दृढता पूर्वक गृह स्वामी की तरह अपने अधिकारों का प्रयोग करने लगा। ठीक इसी प्रकार आपका अहंकार बन्दर के समान है। आप इस बन्दर को लाखो जन्मों से प्रसन्न करने का प्रयास करते आ रहे हैं, परन्तु आज

तक सफल नहीं हुए। जब आप ·अपने अहंकारको ही संसार में सर्वाधिक महत्व देगे तब आप अपनी मानसिक शांति भग कर देंगे। जब तक यह किया चलती रहती है तब तक आप अहंकार के कारण कर्मो के जाल मे उलझते जाते हैं। परन्तु स्वाध्याय, चिन्तन, सत्संग और मनन से आप यह अनुभव करते हैं कि आपका वास्तविक स्वरूप अहंकार नही है। अहंकार का संसार तो बहुत सीमित है। आप वास्तव मे अहंकारिक जगत के नहीं, बल्कि इससे परे हैं।' इसलिए आप जीवन का दूसरा मार्ग अपनाते हैं। आप स्वयं को 'मै' और 'मेरेपन' के भाव से पृथक करने लगते है। इसे वैराग्य कहा जाता है। आप निश्चय करते हैं कि आप यह शरीर नहीं हैं। जिस अहंकार को आप सर्वाधिक महत्वपूर्ण वास्तविकता मानते रहे हैं, वह प्रतिबिम्ब मात्र है। जिन चीजों को आप अपना मानते है, वे वास्तव में आपकी नहीं हैं। संसार की किसी चीज के नियत्ता अथवा स्वामी अहकार नहीं है। इस तथ्य को अच्छी प्रकार समझ कर दृढ़ता पूर्वक निश्चय कीजिए–'वास्तव में ब्रह्माण्डीय सत्ता से एकत्व स्थापित करना आध्यात्मिक जीवन में प्रगति करने का रहस्य है।

कर्मयोग की महत्ता

कर्म योग इस प्रकिया का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अग है। आपकी कियाये कर्मयोग की भावना से की जानी चाहिए। इसका क्या अर्थ है? जब तक अहंकार आप में कियाशील रहता है तब तक आप बहुत उत्साह से कार्य करते हैं, क्योंकि आप अनुभव करते हैं कि उन कार्यों से आपके अहकार तथा उससे सम्बन्धित लोगों को लाभ होने वाला है। परन्तु कल्पना कीजिए कि जब आपका कार्य पूर्ण हो जाता है तब जिसके लिए आप कार्य कर रहे थे यदि वे आपसे दूर हो जायें अथवा मर जाये तब क्या होगा?

इस स्थिति मे अधिकाश व्यक्ति जो कुछ भी उपलब्धि प्राप्त किये होते है, उन्हें फेक कर दुःखी और निराश जीवन व्यतीत करने लगते है। परन्तु ऐसा होना नहीं चाहिए। यदि आपके अन्दर कर्मयोग की सच्ची भावना होगी तो आप अनुभव करेंगे कि लोग आप के नहीं है। आपने जो भी उपलब्धि की है उसे दूसरों को अर्पित कर देना चाहिए। आपके चतुर्दिक जो संसार है वह कभी समाप्त नहीं होगा। यह निरन्तर विद्यमान रहेगा। जीवात्मायें अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिए बार–बार पुनर्जन्म की प्रकिया मे आती रहती है। मन में इस भावना को दृढ कर अहंकार रहित हो अपना कार्य करना चाहिये।

अर्जुन का उदाहररण

जब आप इस अन्तर्दृष्टि से कार्य सम्पादन करेंगे तो आप निष्कामता की अवस्था प्राप्त कर लेंगे। तब आप किसी उपलब्धि विशेष की कामना करने के बदले परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए ही विभिन्न प्रकार के कार्य करेंगे। गीता का यही सार है। महाभारत के आरम्भ मे अर्जुन अपने सभी मित्र एवं सम्बन्धियों को शत्रुपक्ष मे खडा देखता है। भीष्म जिनकी गोद में उसका बचपन व्यतीत हुआ तथा द्रोणाचार्य जिन्होंने स्नेह – प्रेम से उसे वाण विद्या की शिक्षा दी, उन्हे भी वह युद्ध के लिए अपने समक्ष खडा पाता है। अचानक उसके मन में द्वंद्व उत्पन्न हो जाता–"इन सारे प्रिय सम्बन्धियो को मारकर यदि मैं साम्राज्य भी जीत लूं तो हमें क्या प्राप्त होगा? क्या मैं कभी खुश रह पाऊँगा? उन सबों को मारकर राज्य लेने से क्या होगा?" अर्जुन का मन इस प्रकार के द्वंद्व कियाशील था। परन्तु उसके विचारों में एक भ्रान्ति है। अर्जुन का तर्क सुनकर और उसके भय को देखते हुए भगवान कृष्ण ने उसे यह बताया कि इस सृष्टि में जो भी होता है, वह सब ईश्वरीय योजना है। कोई व्यक्ति अपने अहंकार की तुष्टि के लिए इस पृथ्वी पर नही

रहता। बल्कि उसके जीवन का उद्‌देश्य आध्यात्मिक प्रगति है। इसके लिए अहंकार को परिवर्तित करते हुए अपने भ्रम को निर्मूल कर होगा।

अपने कर्मों के बदले किसी पारितोष अथवा फल की आशा किए बिना केवल ईश्वर पूजा की सच्ची भावना से ही कार्य करना चाहिए। आप किसी को नष्ट करने जा रहे हैं, अथवा कोई आपको नष्ट कर देगा ये दोनो ही भाव गलत है। आपकी अन्तरात्मा अपरिवर्तनशील तथा अमर है। उस आत्मा को उद्‌घाटित कीजिए, उसी में स्थित रहिए तथा उसकी अनुभूति कीजिए। जब आप आत्मसाक्षात्कार कर लेंगे तो आपको परमानन्द प्राप्त हो जाएगा तथा आपके समस्त दु:ख हमेशा के लिए समाप्त हो जायेंगे। साधक होने के नाते आपको इस सत्य का अनुभव करना चाहिए कि अपने निम्नस्वरूप, अहकार के लिए नही –बल्कि उच्च स्वरूप– आत्मा के लिए जी रहे है। एक बार ज़ब इस क्रिया का आरंभ कर देगे तो आप का मन सर्वोच्च प्रकार के सकारात्मक सोच – परमात्मा की ओर प्रगति मे संलग्न हो जाएगा।





II

संकल्प शक्ति

का

विकास

वैयक्तिक मन अनन्त ब्रह्माण्डीय
मन की एक लहर है। अहंकार
और अविद्या की परिसीमाओं
से ऊपर उठकर कोई भी
अपने मन को ब्रह्माण्डीय
मन के साथ संयुक्त
कर सकता है। ऐसा करके वह
ब्रह्माण्डीय स्रोत से अनन्त
शक्ति प्राप्त कर इस
जगत में आश्चर्य
जनक परिवर्तन
ला सकता
है।

१

संकल्प शक्ति

संकल्प शक्ति पूर्ण विकसित हो रहे व्यक्तित्व सुमन से निकलने वाली सुगन्ध है। भौतिक अथवा आध्यात्मिक किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए संकल्प शक्ति ही दिशा निर्देश करती है। जिसे यह शक्ति प्राप्त है वह अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर लेता है, परन्तु जिसमे इसका अभाव है वे अपने लक्ष्य तक नही पहुँच पाते। आपकी आत्मा मे अनन्त शक्ति है और आपका मन आत्मा से ही शक्ति प्राप्त करता है। मन या तो सकारात्मक अथवा ऋणात्मक –विध्वंसात्मक हो सकता है। यह शक्ति का या तो सदुपयोग अथवा दुरुपयोग कर सकता है। यद्यपि यह शक्ति सबो में रहती है, फिर भी इस शक्ति स्रोत का सभी लोग समान रूप से सदुपयोग नहीं करते। अधिकांश व्यक्ति तो अज्ञान के कारण अपनी अनन्त संभावनाओं का दुरुपयोग करते हैं। दूसरे शब्दो में आप अपनी संकल्प शक्ति के द्वारा अनुकूल– धनात्मक अथवा प्रतिकूल– ऋणात्मक परिस्थिति का निर्माण करते हैं। उदाहरण के लिए यदि आप स्वयं को विषम स्थिति में ला खडा करते है, तो यह आपके मन की ऋणात्मक शक्ति की अभिव्यक्ति है।

इसलिए शुभ संकल्प कैसे विकसित किया जाय यह जान लेना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए जीवन में सुख, समृद्धि, सुरक्षा और सफलता के लिए इस लक्ष्य को प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए

आवश्यक है। आप मे ऐसी क्षमता होनी चाहिए कि जीवन मे जो भी आवश्यक हो उसे प्राप्त करने का यथोचित सकल्प आप मे हो तथा यह भी सावधानी रखनी है कि आप सकल्प शक्ति की ऋणात्मक–विध्वंसात्मक अभिव्यक्ति से भी स्वय को बचाए।

सात्विक, राजसिक और तामसिक संकल्प

आपका संकल्प सात्विक, राजसिक और तामसिक इन तीनों मे से किसी एक प्रकार का हो सकता है। सात्विक संकल्प उत्कृष्ट और उच्चस्तरीय होता है। जब आपके मन में दूसरे व्यक्ति के प्रति सद्विचार और सद्भावना उत्पन्न होती है, जब आप आन्तरिक रूप से यह निश्चय करते हैं कि "मै आत्मज्ञान प्राप्त करूगा। मुझे परमेश्वर का सच्चा भक्त बनना है" तो यह सात्विक संकल्प की अभिव्यक्ति है। जब आप में सद्संकल्प उत्पन्न होता है तो आप अपने आन्तरिक रहस्यमय स्रोत से शक्ति प्राप्त करने लगते हैं तथा दिव्य ईश्वरीय कृपा आपको स्वतः मिलने लगती है।

सात्विक संकल्प आपके मानसिक शक्ति की उच्चस्तरीय कियाशीलता है। जब इसे कार्य रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है तो आप को असीम संतोष और विश्रान्ति का अनुभव होता है।

राजसिक संकल्प आपके अहं से निर्देशित होता हैं। अहं के स्तर पर आप यह धारणा बना लेते हैं कि "यदि मैं इस कार्य मे सफल हो गया तो अधिक सुखी, समृद्ध और आनन्दित हो जाऊँगा।"

तामसिक संकल्प अविद्या पर आधारित होता है। इसकी अभिव्यक्ति बहुधा उस समय होती है जब किसी व्यक्ति में अज्ञान के कारण यह भ्रान्तिपूर्ण धारणा बन जाती है कि उसकी प्रगति में कोई दूसरा व्यक्ति बाधक है। व्यावहारिक दृष्टिकोण से आप पूर्णतः सही हो सकते हैं। कोई आपकी योजना का विरोधी या आप से ईर्ष्या कर सकता है। कोई आप से शत्रुवत बर्ताव भी करता है। इसके परिणाम स्वरूप

आप उस व्यक्ति से प्रतिशोध लेने का सकल्प करते है। तामसिक सकल्प आत्मघाती है क्योंकि जिस व्यक्ति मे यह होता है, उसकी आध्यात्मिक सुग्राहकता दुर्बल और जीवन छिछला होने लगता है। यदि आप दूसरे लोगों के लिए कुछ अशुभ भाव या विचार उत्पन्न करते हैं, तो यह लौटकर पुनः आपके पास ही आ जाता है। ऐसे विचार दूसरों को हानि पहुँचाने के बदले उन्हें कही अधिक हानि पहुँचाते है, जिन्होने उसे उत्पन्न किया है। इसलिए जीवात्मा की अनन्त शक्ति को जान लेना आवश्यक है। अत्यन्त धैर्य और प्रयास से आप उन शक्तियो को उद्घाटित कर स्वयं को अनन्त ऊँचाई तक उठा सकते हैं। विकास का यह क्रम आत्मसाक्षात्कार प्राप्ति तक चलता है।

विपत्तियों का सामना कैसे करें

दैनिक जीवन मे अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितिया आती रहती हैं। विपरीत परिस्थितियों के कारण व्यक्ति में निराशा, चिन्ता, व्यग्रता, उद्विग्नता और अन्य प्रकार की समस्याओ का सामना करना पडता है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि जहाँ तक सभव हो प्रतिकूल परिस्थितियों से बचें। यदि उन्हें रोकना असंभव हो तो उनका धैर्य पूर्वक सामना करने की कला विकसित करना भी आवश्यक होगा। संकल्प शक्ति विकसित करने का रहस्य धैर्य एव बुद्धिमत्ता पूर्वक सहनशीलता विकसित करना है।

यदि आप विषम परिस्थितियो के मध्य भी अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने के प्रयास में लगे रहते है, तो आप में निश्चित रूप से सकल्प का विकास होगा। आप अच्छी तरह से जान लें कि यदि सब कुछ अनुकूल और ठीक रहे तो आप में किसी प्रकार का संकल्प नहीं विकसित हो सकता है। जीवन के सभी क्षेत्रों में जो भी महान व्यक्ति हुए हैं उन सबो में समान रूप से एक गुण विद्यमान रहा है और वह गुण है—विषम परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बना कर लक्ष्य प्राप्ति में संलग्न रहना। उन लोगों ने धैर्य पूर्वक अपमान और विभिन्न यातनाओं को सहा है।

दूसरे लोगो की आलोचना से वे कभी हतोत्साहित अथवा निराश नही हुए।

छोटी-छोटी बातों को भूल जाइए,

संकल्प शक्ति विकसित करने के लिए यह भी आवश्यक है कि दूसरे लोगो के साथ व्यवहार करते समय थोड़ा सावधान रंहें। यदि आप सावधान नहीं रहेंगे तो सभवतः आप एक ऐसे व्यक्तित्व का विकास कर लेंगे जो बात–बात में अपना संतुलन खो देता है अथवा प्रभावित हो जाया करता है। इस ससार में बहुत सारी व्यर्थ की बातें और कियाये चलती रहती हैं। यदि आप उन्हीं तुच्छ बातों में स्वय को उलझाए रखेंगे तो वास्तव में जब आपके समक्ष कुछ ऐसी समस्यायें आयेंगी जहाँ आपको सचमुच चिन्तित होने की बात हो तो आपका मन उसे देखते ही आवाक् रह जाएगा। ऐसा इसलिए होता है कि आपकी मानसिक शक्ति छोटी–छोटी समस्याओं और तुच्छ बातो के पीछे ही व्यर्थ होती रही। अब वास्तविक समस्या को सुलझाने के लिए उसका कोई अंश भी नही बचा होता है। यदि आप स्वयं को जीवन की तुच्छ बातो मे नही उलझाते तो बडी समस्या का समाधान अपनी मानसिक शक्ति के उपयोग से कर सकते हैं।

यदि आप गभीरता पूर्वक विचार करेगे, तो आपको ज्ञात होगा कि लोग स्वय ही अपनी समस्यायें उत्पन्न कर लेते है। वे स्वयं को ऐसी परिस्थितियों में रखने के अभ्यस्त हो जाते हैं, जिसमें उनका मन और मस्तिष्क तनाव में रहे। प्रत्येक व्यक्ति मे ऐसी क्षमता विद्यमान है कि वह अपने आपको ऐसे प्रशिक्षित करे कि छोटी–छोटी बातों में स्वयं को उलझाने के बदले उन्हे उपेक्षित कर अपना विकास कम बनाये रख सके।

चिन्ता करने की आदत पर विजय

अपने व्यक्तित्व को इस प्रकार प्रशिक्षित करें कि आपको चिन्ता करने की आदत न लग जाय। जब यह आदत आपको लग जाती है, तो आप चाहे जिस किसी भी परिस्थिति मे क्यों न हो, चिन्ता करते रहते हैं। आपने सोचा होगा कि धनी बन जाने के बाद आपको किसी चीज की चिन्ता नहीं करनी होगी। परन्तु जब एक दिन आप धनी हो जाते हैं तो स्वयं को पहले से अधिक चिन्ताओं से ग्रसित पाते हैं।

इस संसार मे आपको चिन्ता से केवल दार्शनिक अन्तर्दृष्टि ही मुक्त कर सकती है। आप इस धारणा को सुनिश्चित करे की परमात्मा आपके जीवन का आधार और संरक्षक है। ईश्वर तथा दिव्य ईश्वरीय योजना मे अटूट विश्वास उत्पन्न कीजिए। यदि आपमें विश्वास है तो आप चिन्तित नहीं होगे।

यदि आप चिन्ता करने की आदत, अशुभ परिकल्पना, भय, उद्विग्नता और उत्तेजनाओं को समाप्त करने की दिशा मे प्रयास कर रहें हैं, तो आप में सकल्प शक्ति का विकास आरंभ हो जाएगा। ऐसा करने से आपका व्यक्तित्व तनाव रहित और लचीला बन जाता है। आप यह जानते हैं कि आपके मन मे जो भी विचार प्रवेश कर रहा है वह असंभव नहीं, बल्कि आपके द्वारा निश्चित रूप से पूर्ण होने वाली सभावना है। जैसे–जैसे आप में सात्विकता का विकास होता जायगा वैसे–वैसे आप के मन में जो भी विचार और योजनाये आयेंगी उन का आधार अहंकार के बदले ईश्वरेच्छा होने लगती है। इसलिए उस कार्य के पूर्ण होने में आपके हृदय में कोई सदेह नही रहता। जब सत के महात्मा कोई योजना आरंभ करते हैं, तो वे पूरी तरह तनाव रहित और विश्रान्त रहते हैं। क्योंकि वे अच्छी तरह जानते हैं कि उस कार्य को आरंभ करने वाला परमात्मा है। चूंकि, परमात्मा को कोई समस्या नहीं होती, अत वे भी क्यों चिन्ता करें ?

ईश्वरोन्मुख बनिए

छोटी–छोट उपलब्धिया प्राप्त करने के बदले स्वय को ईश्वरोन्मुख बनाने का संकल्प करे। इस लक्ष्य की ओर आप जितनी अधिक प्रगति करेगे उतनी ही आपको संकल्प शक्ति प्राप्त होगी। इससे आपका मन शक्ति का असीम स्रोत बन जाता है तथा आपके सृजनात्मक और शुभ विचारों से असख्य व्यक्ति प्रेरणा प्राप्त करेंगे। आप अनुभव करेंगे कि आप परिसीमित व्यक्ति नहीं बल्कि सार्वभौमिक सत्ता के साथ एक हैं। संकल्प शक्ति विकसित करने का उद्देश्य भी यही है।

अपने व्यक्तित्व को अनुशासित कीजिए

जो अपना विकास चाहते है उनके लिए यह आवश्यक है कि वे अपनी परिस्थिति और क्षमता के अनुसार अपने व्यक्तित्व को अनुशासित करे। अनुशासन कई प्रकार के हो सकते हैं। जैसे– प्रातः सूर्योदय से पूर्व जगना, पूरे दिन के लिए एक सुनिश्चित कार्यक्रम बनाकर उसका अनुपालन करना, कुछ अवधि तक अपना मन पसन्द भोजन और पेय का परित्याग करना, कुछ विशेष अवसर पर व्रत रखना इत्यादि। इन सबों के अभ्यास से आपका सकल्प सशक्त बनता है।

परन्तु अनुशासन ही आपका लक्ष्य नहीं बन जाय। चूंकि, इस प्रकार के अनुशासन सीमित तथा नीरस होते हैं। इसलिए आप ऊँनसे उब नहीं जाये उसका ध्यान रखे। अनुशासन के पीछे उद्देश्य यह है कि आप अपने मन को इस प्रकार उन्नत करें कि यह जीवन की प्रत्येक स्थिति का उपयोग सर्वोत्तम रूप से कर सके।

किसी विशेष प्रकार के अनुशासन का पालन करते समय आपको इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि आपकी तपस्या की सफलता समय, सगति, जीवन की अवस्था, आध्यात्मिक विकास और अन्य कई

बातो पर निर्भर करती है। जैसे–जैसे आप आध्यात्मिक रूप से विकसित होते जाते है, वैसे–वैसे विकास की निम्नावस्था के लिए जो अनुशासन अत्यन्त महत्वपूर्ण हुआ करता था वह मूल्यहीन और अनावश्यक बन जाता है। इसके अतिरिक्त स्वयं को अनुशासित करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि आप कोई ऐसा कार्य अथवा अनुशासन न अपनाये जो आपके लिए घातक और हानिकारक हो। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप यह निर्णय लेते है, कि "मैं एक सप्ताह तक सभी प्रकार के प्रोटीन (जैविक एवं वानस्पतिक) भोजन लेना बन्द कर दूंगा।" एक सप्ताह के पश्चात आप कहते है, "एक सप्ताह के प्रोटीन त्याग से मुझे बहुत अधिक सकल्प प्राप्त हुआ है। यदि मै कुछ महीनों तक प्रोटीन नहीं लू तो मुझे कितनी अधिक संकल्प शक्ति प्राप्त होगी?" इस प्रकार की भावना आपके लिए हानिकारक भी हो सकती है। क्योंकि आहार के नियम गणितीय नियमों के समान नहीं है। यदि आप स्वास्थ्य के नियमों का पालन नही करेंगे तो भीषण रूप से बीमार भी हो सकते हैं।

आपको यह जान लेना चाहिए कि साधारण जीवन मे सकल्प शक्ति की कुछ बुराइया भी हैं। उदाहरण के लिए आप यह घोषणा करते है–"आज से आरंभ कर मैं एक सप्ताह तक चीनी का सेवन नही करूंगा।" इसके पश्चात आप प्रतिदिन कैलेण्डर पर दिन गिनते रहते है। छठे दिन की शाम को आप अति प्रसन्न होकर कहते हैं–"आह ! आखिर सप्ताह का अन्त हो ही गया। कल मैं जी भर कर मिठाइयां खाउॅगा।" आप पूरे सप्ताह चीनी खाने के आनन्द के विषय मे ही सोचते रहे। यद्यपि सप्ताह भर चीनी नहीं लेने से आपके संकल्प में एक ओर कुछ वृद्धि तो अवश्य हुई परन्तु सातवें दिन चीनी खाने के आनन्द की कल्पना जो आपके अवचेतन मन में चलती रही उससे संकल्प वृद्धि में अवरोध भी हुआ। परिणामत: एक सप्ताह के अनुशासन के पश्चात आप बहुत थोड़ी ही प्रगति कर पाते हैं। आवश्यकतानुसार स्वयं को अनुशासित करने के लिए छोटी–छोटी पाबन्दियां लगा सकते हैं। परन्तु यही आपके जीवन का प्रमुख अंग नही बन जाय। इसके विपरीत आप

इस बात पर विशेष ध्यान दें कि जीवन की प्रत्येक परिस्थिति का सर्वोच्च उपयोग करते हुए आप कैसे अपने लक्ष्य की ओर बढ सकते है, तथा कौन से अनुशासन का पालन कर सकते है। अपनी दुर्बलता और चचलता, मानसिक शक्ति का संरक्षण और जीवन में सफलता प्राप्ति के लिए जिस संकल्प की आवश्यकता है उसे ध्यान, प्रार्थना, जप, सत्संग सतुलित जीवन एवं सन्त महात्माओं की जीवनी का अध्ययन और उनके आदर्शों के अनुपालन से आप प्राप्त कर सकते है। जैसे–जैसे आपका संकल्प सशक्त होता जायगा आप इस प्रकार से विकसित होने लगेंगे कि आपकी इच्छा ईश्वरेच्छा हो जाएगी। आपका संकल्प ईश्वरीय संकल्प हो जाएगा तथा आप ईश्वर के साथ एकत्व स्थापित कर लेगे। इस अवस्था में आंपको असीम आनन्द एवं स्वतंत्रता का अनुभव होगा।



२

संकल्प शक्ति विकसित करने की विधि

व्यक्ति की वह आध्यात्मिक शक्ति जिसकी सहायता से वह किसी कार्य को पूर्ण करता है, संकल्प शक्ति कहलाती है। इस से दूसरों के कल्याण के लिए जो विचार और योजनायें उठती हैं, उन्हें शक्ति और दृढता प्राप्त होती है। इसके अभाव में व्यक्ति कोई कार्य आरंभ तो कर देता है, परन्तु ज्यो ही कोई समस्या आ जाती है तो लोग उसकी आलोचना करने लगते हैं और वह उस कार्य को पूरा किये बिना ही छोड़ देता है।

जब आप मे दृढ़ सकल्प है, तो आप जब एक बार कोई कार्य हाथ में लेते हैं अथवा अपने मन में कुछ प्राप्त करने के लिए निश्चित कर लेते हैं तो धैर्य पूर्वक उस कार्य को पूरा करने की दिशा मे संलग्न रहते हैं। चाहे कितनी भी बाधायें और आलोचना क्यों न हों, आप तब तक पुरुषार्थ करते रहते हैं, जब तक वह कार्य पूर्ण न हो जाय। साथ ही जीवन की अनेक बाधाओं और अवरोधों से यह शक्ति दुर्बल हो सकती है। परन्तु जब आप उनका सामना समुचित आध्यात्मिक दृष्टिकोण से करेंगे तो उससे आपका संकल्प बढ़ेगा। बाधाओं के बीच ही आपकी शक्ति और तीव्र होगी। परन्तु आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि के अभाव में जितनी बार भी आपके समक्ष बाधायें और समस्याये आयेगी आप

निराशा और दु ख के सागर मे पूरी तरह डूब जायेंगे और आपका सकल्प दुर्बल हो जायेगा।

आपके संकल्प को दुर्बल करने वाले कारण

कई कारणों से आपका संकल्प दुर्बल होता है। इन में सबसे प्रमुख है–'चिन्ता करने की आदत। व्यक्ति इस सत्य की उपेक्षा कर देता है कि यह ससार एक दिव्य ईश्वरीय योजना है और ईश्वरेच्छा से नियंत्रित होता है। इस शाश्वत सत्य की अवहेलना करने वाले व्यक्ति को ईश्वर के प्रति समर्पित होने की कला नही ज्ञात है। परिणामत उसके मन मे चिन्ता, उद्वेग और विभिन्न प्रकार की उलझन उत्पन्न हो जाती है। जब चिन्ता करने की आदत गहरी हो जाती है, तो जीवन की कैसी भी परिस्थिति क्यों न हो, व्यक्ति चिन्तित ही रहा करता है। वह जीवन की सर्वोत्तम स्थिति में रहते हुए भी इस आदत के कारण एक दुष्चक्र में फंस जाता है। वह जितना अधिक चिन्तित होता है, उतना ही उसका संकल्प दुर्बल हो जाता और वह उतनी ही अधिक चिन्ता करने लगता है।

भय और व्यग्रता से भी संकल्प शक्ति क्षीण होती है। इससे व्यक्ति निराशावादी बन जाता और उसका संकल्प दुर्बल हो जाता है। चूँकि यह संसार एक सापेक्षिक सत्ता है, इस लिये प्रत्येक परिस्थिति का एक अच्छा और बुरा पक्ष होता है। आप किसी परिस्थिति विशेष में धनात्मक अथवा ऋणात्मक प्रतिकिया व्यक्त कर सकते हैं। यदि आप धनात्मक प्रतिकिया व्यक्त करने की कला में प्रवीण हो जाते हैं तो आपका संकल्प निरंतर बढ़ता जायेगा। इसके विपरीत आप अच्छाई की उपेक्षा कर केवल ऋणात्मक पक्ष बुराई देखते रहेंगे तो आपकी संकल्प शक्ति दुर्बल होती जायेगी। इस सत्य को कभी नहीं भूलिए कि–आप अपने भाग्य के निर्माता स्वय हैं।

जीवन जीने की कला सभवत उत्कृष्टतम कला है। आप उच्च कोटि के व्यवस्थापक, इन्जिनियर अथवा विद्वान हो सकते हैं। आप अनेक लोगों के लिए प्रेरणा स्रोत तथा सच्चे कार्यकर्ता हो सकते हैं, परन्तु जब एक अजनवी आपके अहंकार को चोट पहुँचाने वाली एक कड़ुवी बात कह देता है, तो आप कई दिन और सप्ताह तक उत्तेजित और व्यग्र रहते है। उससे प्रतिशाोध लेने के लिए समय की प्रतीक्षा करते है। आप बहुत सारे कार्य सम्हाल भले ही लें, परन्तु जीवन को सम्हालना आपके लिए कठिन हो जाता है।

संकल्प शक्ति को विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि आप चिन्तन शील होकर आत्मनिरीक्षण करे। यदि आप में आत्मनिरीक्षण का अभाव है, तो आन्तरिक शक्ति और सकल्प वृद्धि करने की एक अनमोल प्रक्रिया से आप वंचित रह जाते हैं। अपने प्रति ईमानदार तथा निष्कपट रहते हुए अपने मन का विश्लेषण और उनकी कमियों को पहचानने का प्रयास करें।

असफलताओं को परिपक्वता से स्वीकारें

संकल्प शक्ति के अभाव में ही आप से गलतिया होती हैं। यदि कोई योजना सफल नहीं हो रही है, तो इसका यह अर्थ है कि कहीं आपके संकल्प में कोई त्रुटि रह गई है। तो फिर भी यह प्रश्न है कि असफलताओं को कैसे झेला जाय? यदि असफलताओ को सही ढंग से स्वीकारने की कला में आप प्रवीण नहीं है तो आप अनजाने ही विनाश का एक कुचक्र आरंभ कर लेते हैं। उदाहरण के लिए मान लें, कि आप कोई कार्य हाथ में लेकर उसका शुभारंभ करते हैं। परन्तु कुछ ऐसी समस्यायें और गड़बडी हुई जिनके कारण वह कार्य पूरा न हो सका। इसके परिणाम स्वरूप आप दु खी और परेशान हो जाते हैं। आप अपने कमरे में जाकर दरवाजे बन्द कर निराशा और दुःख के घनघोर अँधेरे मे डूब जाते हैं। जब आपकी निराशा और बढ़ जाती है, तो आप

यह सोचने लगते हैं। कि मैं जन्मजात असफल व्यक्ति हूँ। चाहे जो भी काम क्यों न हाथ में लूँ मुझे सफलता नहीं प्राप्त हो सकती। मैं उन लोगों जैसा नहीं हूँ जिन्हें सभी कार्यों में सफलता मिलती है। इस प्रकार आप इस बात को सोचकर स्वयं को समझा लेते हैं, कि चूंकि आपके जन्म के समय ग्रह नक्षत्र की स्थिति अनुकूल नहीं थी इसलिए आपको आजीवन असफलता ही मिलती रही। ऐसा सोचकर आप अपने संकल्प को और दुर्बल बना रहे हैं।

यदि किसी कार्य में आप असफल हो जाते हैं, तो दुःख और पश्चाताप तब तक तो ठीक है, जब तक कि उस असफलता का आप कारण नहीं खोज लेते। परन्तु यदि आप केवल पश्चाताप करके दुःखी चिन्तित और निराश हो रहे हैं, तो इसका कोई मूल्य नहीं है। ऐसा करके आप अपने मन को निम्न अवस्था मे ला रहे हैं, जो सर्वथा अनुचित है।

सच्चे अर्थों में बड़े होना

अधिकांश लोगों के लिए बड़े होने का अर्थ अधिक से अधिक चिन्ता और व्यग्रता का बोझ ढ़ोना है। पच्चीस वर्ष की अवस्था में आपके सर पर चिन्ताओं का हल्का बोझ होता है। पचास वर्ष की उम्र में यही बोझ दस गुणा बढ जाता है तथा सत्तर वर्ष की आयु में चिन्ताओं का यह बोझ पचासों गुणा अधिक हो जाता है।

परन्तु दार्शनिक रूप से यह ठीक नहीं है। "बड़े" होने का अर्थ है कि आप अज्ञान के कारण विगत जन्मों की चिन्ताओं का जो बोझ ढ़ोते आ रहे हैं, उसे क्रमशः कम करते हुए अपनी बुद्धि और मन को हल्का करें। जैसे–जैसे उम्र बढ़ती जाय वैसे–जैसे यह बोझ कम होना चाहिये। जितना ही अधिक आप इस बोझ को कम करेंगे, उतना ही अधिक बड़े होंगे अन्यथा आप चिन्ताओं के भारी बोझ से दबे रहेंगे।

इस प्रकार आप स्वयं देख सकते हैं, कि जीवन में आई निराशा, उदासी और असफलता का सामना कैसे किया जाता है। यदि आप

ठीक–ठीक कर पायें तो संकल्प शक्ति विकसित करने की रहस्यमय कला आपको ज्ञात हो जायेगी।

ईश्वर द्वारा प्रस्तुत परीक्षाओं का स्वागत करें

जब जीवन में विषम परिस्थितियां आई हों, तो उस समय तपस्या का भाव उत्पन्न करना चाहिये। उस समय आप ऐसा विचार करें–"आपके सामने विपरीत परिस्थितियां इसलिए आई हैं, कि परमात्मा आपसे कोई महान कार्य कराना चाहता है। इसलिये वह आपकी परीक्षा ले रहा है।" उदाहरण के लिए स्वर्ण की शुद्धता की परख करने के लिए उसे तपाना पड़ता है। अथवा कई प्रकार के रासायनों में डालना होता है। आपके व्यक्तित्व की परख करने के लिए भी ऐसी ही जांच की आवश्यकता होती है। यदि आपके व्यक्तित्व रूपी स्वर्ण को चमकाना है, तो प्रकृति कड़ी परीक्षा लेती है। यह परीक्षा जितनी कठिन होगी, आपका व्यक्तित्व उतना ही अधिक चमक उठेगा।

इसलिए मन से यह धारणा निकाल दीजिये कि ये विपत्तियां आपके दुर्भाग्य के कारण आई हैं तथा आप अभागे व्यक्ति हैं। इसके विपरीत आप इस भावना को दृढ़ करें, कि प्रकृति आपसे कोई महान कार्य कराना चाहती है। उसी के लिए आपको तैयार किया जा रहा है। आपका अहंकार जो–जो चीजें चाहता है, वे समस्त वस्तुयें भी यदि आप से छिन जाती हैं, तो भी यह विश्वास बनाये रखें कि परमात्मा आपकी कल्पना से अधिक आप में रूचि रखते हैं। वे आप में गहराई से विद्यमान हैं। इसलिये धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करने की शक्ति उत्पन्न कीजिए। अपने आपसे कहिये–हे ईश्वर, आप मुझ से और क्या चाहते हैं'?

इस तथ्य को सहजता से समझने में एक कथा सहायक होगी। कृष्ण अवतार के समय किसी गांव में एक ब्राह्मण रहा करता था। धीरे–धीरे उसके परिवार के सभी लोगों का देहान्त होने के कारण वह अकेला रह गया। उसके पास केवल एक दूध देने वाली गाय शेष रह

गई। गाय न केवल उसे स्वादिष्ट दूध दिया करती बल्कि, उसकी साथी भी बन गई थी। क्योकि उसके अतिरिक्त अब ससार में उसका और कोई नही बचा था।

एक दिन गाय बीमार हो गई और मर गई। अर्जुन को जब यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने भगवान श्री कृष्ण से कहा– " यह ब्राह्मण आपका अनन्य भक्त है। फिर भी उसकी एक मात्र गाय क्यों मर गई? उसे सहारा देने वाली तो बस यह गाय ही बची थी उसे भी आपने उससे क्यों छीन लिया?"

कृष्ण ने कहा–"चूंकि वह मेरा अनन्य भक्त है, अत. मैने उसके हित में ही ऐसा किया है। उसने जीवन के सब मोह बन्धन तोड दिये थे, परन्तु इस गाय में आसक्ति रहने के कारण उसका आध्यात्मिक विकास पूर्ण नही हो रहा था। मैं नहीं चाहता था कि इस छोटी सी चीज में उसका मन आसक्त रहे।

इस कथा का अभिप्राय यह है कि किसी घटना अथवा परिस्थिति को दो दृष्टि से देखा जा सकता है। यदि आप उसे अहंकारिक दृष्टि से देखते हैं, तो आप दुःखी होगे। परन्तु जब आप उसी परिस्थिति को परमात्मा की दृष्टि से देखते हैं, तो आप पायेंगे कि उस परिस्थिति के माध्यम से व्यक्ति किसी महान कार्य के लिए तैयार किया जा रहा है। ईश्वर आप को जितनी समस्यायें देता है, जितनी भी विपत्तियों के बीच छोडता है, उतना ही अधिक वह आप में रूचि ले रहा है। आप महान उपलब्धियों से प्राप्त होने वाले आनन्द के लिए तैयार किये जा रहे हैं। ऐसी समझ और भावना विकसित करनी चाहिए।

विरोधी एवं बुरे व्यक्तियों के साथ व्यवहार

संकल्प शक्ति विकसित करने के लिए जो दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता है, विरोधी और बुरे लोगों के साथ व्यवहार करने की कला

सीखना। जब तक आप इस ससार में हैं, तब तक आपको अनेक प्रकार के लोगों के साथ मिलना जुलना और व्यवहार करना पड़ता है। परिणामतः कई प्रकार की गलत फहमिया भी होगी। इसलिए आपको बुद्धिमत्ता पूर्वक लोगों से सम्पर्क करने की कला विकसित करनी होगी। यह विशेत तब और आवश्यक हो जाता है, जब आप किसी निकट सम्बन्धी के साथ रहते है। कभी–कभी तो आपको मजबूर होकर लोगों के साथ बहुत निकट का सम्पर्क बनाना पड जाता है, तथा उनके सान्निध्य मे कार्य करना पडता है। परिणामतः अनेक प्रकार की गलत फहमियां उत्पन्न हो जाती है।

उदाहरण के लिए पति दिन भर का थका हुआ शाम को घर आता है, इधर पत्नी पूरे दिन अकेले घर में काम–काज अथवा बच्चो की देख–रेख के कारण ऊबी होती है। वे दोनों मन में कुछ न कुछ आशा रखें एक दूसरे के सामने आते है। इस स्थिति में यदि थोडी भी कड़ुवाहट अथवा उत्तेजना होती है, तो वह बहुत विस्फोटक रूप ले लेती। इसलिए जिनके साथ चलना कठिन है, ऐसे लोगों की क्रियाओं और व्यवहार को सहने की महान कला विकसित कीजिए। आपको उनके प्रति सहिष्णु बनने का प्रयास करना चाहिए।

शारीरिक तप से संकल्प शक्ति विकसित होती है

गीता में तीन प्रकार का तप बताया गया है। संकल्प शक्ति विकसित करने के लिए ये तीनों आवश्यक हैं। इनमें पहला है शारीरिक तप। आपका यह भौतिक शरीर सेवा करने के लिये ही मिला है। इसलिए शरीर पर बहुत दयावान नहीं होइये। इस पर थोड़ी सख्ती कीजिए क्योंकि जब शरीर थोड़ा काम से दबा होता है, तो अधिक स्वस्थ रहता है। दूसरे शब्दों में अपने आस–पास की चीजो तक पहुँचने के लिए पहिये वाली कुर्सी पर चक्कर नहीं लगाइये। खड़े होइए और छोटे मोटे काम स्वयं कर डालिए। थोड़ी देर तक टहलिये। यदि इच्छा हो

तो प्रतिदिन थोड़े समय तक दौड़ लगाइये। कार्य करते समय चुस्त रहिए। यह भाव कभी नहीं लाइये कि शरीर को आराम देने में ही जीवन का आनन्द है। आप शरीर को जितना आराम देंगे रोग होने की संभावना उतनी ही होगी। हठयोग, सेवा और सद्‌कर्मो के नियमित्त अभ्यास के द्वारा शारीरिक व्यायाम कीजिये।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है, कि अपने शरीर से अहंकार की गंध भी नहीं आने दें। लोग शरीर के माध्यम से ही मानसिक सनक तथा धनात्मक और ऋणात्मक मनोवृत्ति की अभिव्यक्ति करते हैं। उदाहरण के लिए जब आप अत्यन्त धूर्त और चालाक व्यक्ति को देखेंगे तो उसका शरीर तना हुआ, जबड़े खींचे हुए और मुट्ठियां बन्द पायेंगे। दूसरी ओर जब आप किसी व्यक्ति के शरीर को तनाव रहित और पूर्ण विश्रान्त स्थिति में देखें तो समझिये कि इसके शरीर से सात्विक स्पन्दन निकल रहे हैं। जब आप लोगों के साथ व्यवहार कर रहे हों तो गीता के अनुसार सतत स्पष्टवादिता की अभिव्यक्ति होनी चाहिये। बच्चों को भोला एवं निष्कपट इसलिए कहा जाता है कि वे बड़े स्पष्टवादी और सहज होते हैं। वे किसी से कुछ नहीं छुपाया करते।

योग में जो सबसे बड़ा शारीरिक तप माना गया है, वह है ब्रह्मचर्य का अभ्यास। गृहस्थों के लिए ब्रह्मचर्य का अर्थ है– पति–पत्नी के बीच सच्ची स्वामी भक्ति तथा भावातीत प्रेम। पति, पत्नी के प्रति और पत्नी पति के प्रति पूरी तरह से निष्ठावान रहे। ब्रह्मचर्य में ऐसा गहन प्रेम उत्पन्न होता है, कि मन से यौन भावना का नामोंनिशान मिट जाता है। यौन जीवन की वास्तविकता ही नहीं रह जाती। जो साधक और सन्यासी बन कर आध्यात्मिक पथ पर एकाग्रता पूर्वक चल रहे हैं, उनके लिए ब्रह्मचर्य एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति यौन भाव से उपर उठकर यह अनुभव करता है–"मैं न तो स्त्री हूँ न पुरुष।" ब्रह्मचर्य का अभ्यास साधना पथ की एक गहन तपस्या है। ॐ यदि व्यक्ति इस तप में सफल हो जाता है, तो संकल्प विकसित करने की दिशा में उस अभूतपूर्व सहायता मिलती है।

ब्रह्मचर्य का अर्थ नरक के तीन द्वार—काम, क्रोध और लोभ पर विजय प्राप्त करना है। कभी—कभी लोग एक पर तो कुछ अंशो तक विजय प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु अन्य क्षेत्रों में बुरी तरह असफल हो जाते है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति काम को तो नियंत्रित कर लेता है, परन्तु क्रोध पर उसे विजय नहीं मिलती या कोई व्यक्ति क्रोध पर विजय प्राप्त कर लेता है, परन्तु उसमें लोभ की प्रबलता हो जाती है। यदि किसी में इन तीनों में से कोई भी दुर्गण हैं, तो वह ब्रह्मचर्य का अभ्यास नहीं कर रहा है। ब्रह्मचर्य का आदर्श यह है, कि आप छोटी—छोटी चीजो पर अपनी शक्ति व्यर्थ न करें।

वाणी का तप

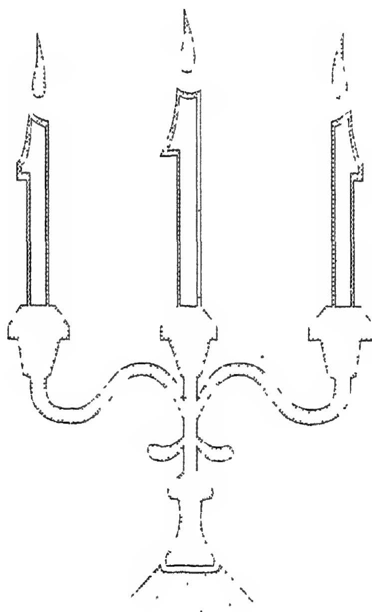
गीता में दूसरा तप वचन अथवा वाणी का बताया गया है। दूसरों को दुःखी करने वाली वाणी नही बोलिए। अपनी दुर्बलताओं और बुराइयों को सही सिद्ध करने का प्रयास नहीं कीजिए। सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय अथवा दूसरों की भलाई करने के लिए ही शब्दों का उपयोग कीजिए। वाणी के तप से ऐसी संकल्प शक्ति विकसित होती है, कि साधक के एक शब्द कहने मात्र से ही हजारों व्यक्तियों में प्रेरणा और नवीन शक्ति का संचार हो जाता है।

मानसिक तप

इसके बाद मन का तप है। इसका अभिप्राय है,मनोनिग्रह एवं मानसिक शान्ति का अभ्यास करना। संस्कृत में शान्त मन को चित्त प्रसाद कहा गया है। इसे बढ़ाइये। भाव संशुद्धि(भावना की परिशुद्धि) अथवा चित्त शुद्धि विकसित कीजिए। अपने मन पर कुभावों और कुवृत्तियों को हावी नहीं होने दीजिए। ऐसी ऋणात्मक वृत्तियां आपके मन में तब उत्पन्न होती है, जब आप उदास, निराश और दुःखी रहते

हैं। आप अनुभव करने लगते हैं कि आप जीवन में कभी सफल नहीं होंगे और आपके लिए इस जीवन का कोई अर्थ नही रह गया है। जब आपके मन मे कुत्सित विचार उठते हैं, तो आप दूसरो के प्रति कूर हो जाते हैं। न तो आप दूसरों में वर्तमान सद्‌गुण को देख पाते हैं और न हीं उन्हें अच्छा बनने के लिए ही प्रेरित कर सकते हैं। आप अनायास और अनजाने ही उनके प्रति कठोर हो जाते हैं।

सत्संग, तप, चिन्तन, ध्यान और ईश्वर समर्पण के द्वारा संकल्पशक्ति विकसित कर जीवन का सर्वश्रेष्ठ लक्ष्य–आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कीजिए।



३

दृढ़ संकल्प प्राप्त करने का सूत्र

तैतरीय उपनिषद् में एक शान्ति पाठ है, जो साधकों में दृढ संकल्प विकसित करने की प्रेरणा देता है। यह ऋषि त्रिशंकु की आध्यात्मिक अनुभूति की अभिव्यक्ति है।

ॐ अहम् वृक्षस्यरेरिवा कीर्तिः पृष्ठम् गिरेरिवा।
उर्ध्वापवित्रो वाजिनीवा स्वमृतमस्मि।
द्रविणं सुर्वचसाम्, सुमेधा, अमृतोक्षितः। इति त्रिशंकोर्वेदानुवचनम्।
ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः।

(तैतिरीयोपनिषद १।१०।१)

मैं सांसारिकता के इस वृक्ष को निर्मूल करने वाला हूँ। मेरी महिमा शैल शिखर से भी अधिक ऊँची है। मेरी प्रज्ञा स्वर्ग को प्रकाशित करने वाले सूर्य से भी अधिक ज्योतिर्मय है। मैं अनन्त का जीवन्त स्वरूप हूँ। मेरी श्री, समृद्धि और वैभव चमकती निधि है। मेरी बुद्धि अमरत्व के जल से परिशुद्ध हो चुकी है। अपने आध्यात्मिक अनुभवों के आधार पर त्रिशंकु ने उद्‌घोषित किया। शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः।

प्रत्येक जीवात्मा में जब अनन्त शक्ति की चेतना हो जाती तब आप भी त्रिशंकु के समान घोषित करते हैं–"मैं इस सांसारिकता के चक्र को गतिशील करने वाला हूँ"। संकल्प शक्ति विकसित करने का

उद्देश्य अपनी चेतना से सासारिकता के भ्रम को निर्मूल कर यह अनुभव करना है–"मैं यह व्यक्तित्व नही वरन् अद्वैत, शाश्वतात्मा हूँ।"

माया के कारण सांसारिकता की भावना व्यक्ति की चेतना मे एक आवरण की तरह है, जिससे मुक्त होकर निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है। पहले सांसारिकता के वृक्ष को हिलाना होगा और फिर आमूल निकाल फेकना होगा। जब तक सांसारिकता के इस वृक्ष को उखाड फेंकने का संकल्प उत्पन्न नहीं हो जाता तब तक व्यक्ति का संकल्प दुर्बल और महत्वहीन रहता है।

उदाहरण के लिए मान लें कि आप रेफेरिजेटर, घर, सम्पत्ति अथवा किसी मित्र का पत्र प्राप्त करने का संकल्प करते हैं। जब ये चीजें आप को मिल जाती हैं, तो आप यह सोचकर अत्यधिक प्रसन्न हो जाते कि आपका संकल्प बढ़ रहा है। कुछ अंश तक यह सही भी है। क्योंकि आपने जो सकल्प किया वह पूरा हुआ। परन्तु अन्ततः आपके संकल्प को इतना परिशुद्ध हो जाना चाहिये कि यह ईश्वरीय संकल्प के साथ तादात्म्य बनाने ले। दोनों एक हो जाय। संत–महात्मा उस अवस्था में आ जाते है जहॉ वे अहंकारिक संकल्प को पूरी तरह से नियंत्रित कर देते हैं। इसके विपरीत वे अनुभव करते हैं–"यह मेरी नहीं, ईश्वरेच्छा बने।" अपने अन्दर अनन्त संकल्प शक्ति प्राप्त करने के लिए शान्ति पाठ की घोषणा के आधार पर आपको कुछ निर्देश दिये जा रहे हैं :–

अहम् वृक्षस्मरेरिवा :-

"मैं इस सासारिकला के वृक्ष को निर्मूल करने वाला हूँ।" आप जन्म–मृत्यु के चक्र में पडने वाले दुर्बल व्यक्तित्व नहीं हैं। सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय और उनके अर्थो पर चिन्तन करते हुए अपने वास्तविक स्वरूप का अन्वेषण कीजिए। संसार आपको नहीं हिला सकता। परन्तु आप में ऐसी शक्ति है कि अपनी चेतना में विद्यमान सांसारिकता रूपी वृक्ष की जड़ों को हिला कर हमेशा–हमेशा के लिए उखाड़ सकते हैं।

कीर्ति पृष्ठम् गिरेरिवा:

"पर्वतों से भी ऊँची हमारी महिमा है।" इस संसार में किसी नश्वर महिमा और यश प्राप्ति की आवश्यकता नहीं। क्योंकि आत्मा की महिमा पर्वतों की तुंग ऊँचाई से भी अधिक भव्य है। आपकी अन्तरात्मा ही ब्रह्म है।

उर्ध्वपवित्रवाजिनीवो

"स्वर्ग से ऊपर चमकते सूर्य से भी अधिक प्रकाशवान हमारी अन्तः प्रज्ञा है।" आत्मानुभूति के पश्चात साधक स्वर्ग की सापेक्षिक धारणा से ऊपर उठ जाता है। सद्कर्मों के परिणाम स्वरूप स्वर्ग इत्यादि की प्राप्ति परमानन्द की तुलना में नगण्य और तुच्छ है।

स्वमृतमस्मि

मैं अमरतत्व की जीवन्त प्रतिमूर्ति हूँ।" इसका अभिप्राय यह है कि प्रत्येक जीवधारी की अन्तरात्मा अमर है। अमृत से अमरत्व प्राप्त होता है। इसी प्रकार आत्मज्ञान से देहाध्यास और अभिनिवेश मृत्युभय समाप्त होता है।

द्रविण सुवर्चसा

"मेरी समृद्धि चमकती निधि है।" यह आत्मानुभूति की निधि है। जब आप अपने ब्रह्मस्वरूप को प्राप्त कर लेते हैं तो जो कुछ भी है, उसके स्वामी आप स्वयं बन जाते हैं। आने जाने वाला यह कोई साधारण खजाना नहीं है।

जब आपको आत्मज्ञान प्राप्त हो जाता है, तो हमेशा– हमेशा आपके पास रहने वाली निधि मिल जाती है।

सुमेधा अमृतोक्षितः

"मेरी बुद्धि अमरत्व के जल से परिशुद्ध हो गई है।" इसका अर्थ है कि आपकी बुद्धि समाधि के जल से परिशुद्ध हो चुकी है। अब यह कोई सामान्य बुद्धि नहीं रही बल्कि, इसका रूपान्तरण अन्त: प्रज्ञा में हो चुका है।

इति त्रिशंकुर्वेदानुवचनम्

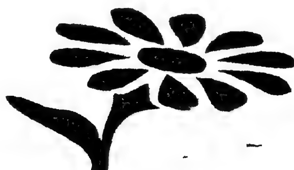
"जब ऋषि त्रिशकु गहन ध्यान में डूब गये तो यही उनकी अभिव्यक्ति थी।" तीन बार शान्ति का उच्चारण तीन प्रकार के दु:खो को समाप्त करने के लिए किया जाता है।

१ मन और शरीर से सम्बन्धित आत्मनिष्ठा दु:ख (दैहिक)।

२ दूसरे लोग एवं संसार द्वारा प्रदत्त वस्तुनिष्ठ दुःख (भौतिक)।

३ व्यक्ति की शक्तियों से परे, तूफान, भूकम्प, प्राकृतिक प्रकोप इत्यादि के रूप में (दैविक) दुःख।

इस शान्ति पाठ के अर्थों के चिन्तन द्वारा सांसारिकता के वृक्ष को निर्मूल कर भव्यता की असीम ऊँचाई पर आसीन हो परमानन्द का अनुभव कीजिए।



४

संकल्प शक्ति की महिमा

मोसेस लाल सागर के पार

ईश्वरेच्छा के अनुसार महान कार्य करने वाले अनेक महामानवों के उदाहरण वर्तमान है। मोसेस एक ऐसे ही महापुरूष थे। जब वे अपने भक्तों को दासता से मुक्त कराकर इजिप्ट से बाहर ला रहे थे तो उनके माध्यम से क्रियाशील हो रही ईश्वरेच्छा के कारण सागर ने उनके जाने के लिए मार्ग दे दिया था। इस महाभियान के समय इजराइल के लोगों के समक्ष दुर्त्त्लंध्य लाल सागर की अथाह जल राशि आ गई जिसके पार जाना असंभव था।

भय और असुरक्षा की भावना से लोग त्राहि– त्राहि करने लगे। सबों ने मौसेस को ही ऐसी विकट स्थिति में लाने के लिए दोषी ठहराया। मौसेस को स्वयं यह नहीं मालूम था कि अब क्या करे। ईश्वर के चरणों में पूर्णतः समर्पित होने के अतिरिक्त उनके लिए कोई दूसरा मार्ग नहीं था। उसी समय एक महान आश्चर्य हुआ। ईश्वर की असीम शक्ति को प्रत्यक्षतः क्रियाशील होते हुए लोगों ने देखा। अनन्त जल राशि दृढ दीवाल की तरह कठोर हो गई जिस पर चलते हुए लोगों ने सागर को पार कर लिया।

भगवान जेसस ने उफनते सागर को शांत कर दिया

बाइबिल में जेसस क्राइस्ट के जीव से सम्बन्धित इसी आश। की एक कथा का वर्णन है। एक समय जेसस अपने साथियों के सा'। नाव में सवार होकर गैलिसी सागर के पार जा रहे थे। अचानक ब भयानक तूफान आ गया। जिसके कारण सागर में ऊँची– ऊँची तरं उठने लगी। ऐसा लगता था कि उनकी नाव अब जल्द ही ज समाधि लेने वाली है। उस समय जेसस गहरी नींद में थे इसलिए थोड़ा भी विचलित नहीं हुए। तूफान से घबड़ाकर उनके साथियों उन्हें उठाया और रक्षा करने की प्रार्थना की। जेसस ने पूछा "श्रद्धा औ विश्वास से रहित तुम लोग "क्यों डरे हुए हो?" इसके पश्चात वे खर हो गये और प्रचण्ड वायु प्रवाह तथा उफनते सागर को जोर से फटकारा। महान आश्चर्य! शीघ्र ही चारो ओर शान्ति हो गई। ईश्वरेच्छा की असीम शक्ति के कारण ही जेसस क्राइस्ट ने प्रलयंकारी तूफान को रोकने में सफलता पाई।

संत–महात्मा अपनी व्यक्तिगत इच्छा से कुछ नहीं करते। वे ईश्वरेच्छा के अनुसार दिव्य ब्रह्माण्डीय कार्य को पूर्ण करते हैं। इस तथ्य को और अधिक स्पष्टतः समझने के लिये महाभारत का एक प्रसंग दे रहा हूँ।

जयद्रथ वध

जयद्रथ आसुरी वृत्ति का एक राजा था जिसने कौरवों की ओर से धर्माचारी पाण्डवों के साथ महाभारत में युद्ध किया था। उस युद्ध में भगवान श्रीकृष्ण ने स्वय अर्जुन के रथ का सारथी बनकर पाण्डवों की सहायता की थी। जयंद्रथ ही अर्जुन के प्रिय पुत्र अभिमन्यु की मृत्यु

का कारण बना। अर्जुन ने तब यह प्रण कर लिया कि अगले दिन सूर्यास्त तक वह या तो जयद्रथ वध कर देगा अथवा स्वयं अग्नि मे जलकर भस्म हो जायेगा।

घटना ऐसी हुई कि कौरवों द्वारा रक्षित जयद्रथ निर्धारित अवधि तक नहीं मारा जा सका। भगवान श्री कृष्ण ने अपनी माया से सूर्य के ऊपर घनें बादलों की रचना कर दी जिससे सभी लोगों को यह दिखाई पड़ने लगा कि सूर्यास्त हो गया है। कौरव सेना में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई क्योंकि अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अर्जुन अब स्वयं अग्नि में प्रवेश कर प्राण देने वाला था।

कौरवो ने लकड़ी एकत्रित कर चिता जलाई। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा–"अर्जुन जब तुम अग्नि प्रवेश करो तो अपने साथ महान धनुर्धर की तरह वाण और धनुष अवश्य लिये रहो।"

जब चिता प्रवेश की अन्तिम तैयारी चल रही थी, तो जयद्रथ भीड में अपना सिर उठा कर यह देखने लगा कि अर्जुन ने अग्नि प्रवेश किया कि नहीं। एक बार जब जयद्रथ अपना सिर उठाकर अर्जुन को देख रहा था तो श्रीकृष्ण ने माया के बादल को हटाकर अर्जुन से कहा–"अर्जुन अभी सूर्यास्त नहीं हुआ है। धनुष उठाओ और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो।" अर्जुन ने देखा कि जयद्रथ कौरव सेना में सिर ऊँचा किये उसे देख रहा है। उसने सावधानी पूर्वक वाणसंधान किया और देखते हीं देखते जयद्रथ का सिर धड से अलग हो गया। दृढ़ एवं अटूट संकल्प के ये कुछ उदाहरण हैं। चूंकि प्रत्येक व्यक्ति वस्तुतः ईश्वर के साथ एक हैं। अतः आत्मज्ञान के द्वारा वह ईश्वर के साथ अपना तादात्म्य बनाकर स्वेच्छा को ईश्वरेच्छा में समाहित कर सकता है।

ईश्वरेच्छा का माध्यम बनें

जब व्यक्ति दिव्य ईश्वरेच्छा के पूर्ण होने का एक माध्यम बन जाता है, तो वह कल्पनातीत सफलता प्राप्त कर लेता है। प्रत्येक व्यक्ति में छुपे ईश्वरीय संकल्प (ईश्वरेच्छा) की तुलना जब व्यक्तिगत इच्छा,

निजी संकल्प) से किया जाता है तो वह बहुत तुच्छ और महत्वहीन प्रतीत होता है।

जब आप संकल्प विकसित करने का अभ्यास करते है, तो आप को ऐसी साधना (आत्मानुशासन) करनी होती है जिससे आप छोटे–मोटे कार्य और लक्ष्यों को सफलता पूर्वक पूरा कर सके। आप सकल्प करते हैं और उस संकल्प को अपने प्रयास से पूर्ण करने की कला सीखते हैं। धीरे–धीरे जब आप इस साधना में आगे बढ़ जाते है, अर्थात आत्मानुशासन की दिशा में आपकी प्रगति अच्छी हो जाती है, तो आप अपने अन्दर अधिकाधिक सकल्प विकसित कर कठिन कार्यों को सम्पादित करने मे उन्हें प्रयुक्त करने की कला ज्ञात कर लेते हैं।

यह गणित सीखने के सामान है। शिक्षा के स्तर के अनुसार ही विद्यार्थियो के लिए विभिन्न प्रकार के गणितीय पाठ्यक्रम बनाये जाते हैं। जब आप आरंभिक गणित सीखते हैं, तो एक विशेष स्तर का ही आपको गणितीय ज्ञान कराया जाता है। परन्तु जब आप गणित की ऊँची कक्षा में चले जाते है, तो आरंभ मे जो विपरीत अथवा परस्पर विरोधी सिद्धान्त थे उनका अध्ययन कराया जाता है तथा आप उन सिद्धान्तों को अब एक दूसरी ही दृष्टि से देखने लगते हैं।

ठीक इसी प्रकार, साधना की आरंभिक अवस्था में जो सकल्प शक्ति (इच्छा शक्ति) आप विकसित करते हैं, वह सापेक्षिक दृष्टि से ही एक शक्ति है। उन्नत अवस्था में आपका व्यक्तिगत संकल्प (स्वेच्छा) ईश्वरीय संकल्प (ईश्वरेच्छा) बन जाता है तथा आपका व्यक्तित्व दिव्य ईश्वरेच्छा की अभिव्यक्ति का एक प्रभावशाली माध्यम हो जाता है। ईश्वर के हाथो में आप एक उपकरण बन जाते हैं। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए आपको यह अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि अहंकार की दृष्टि से जो भी संकल्प किया जाता है वह चाहे कितना आकर्षक एवं लुभावना क्यो न हो, अज्ञान पर ही आधारित है। अहंकारिक कामना (संकल्प) की पूर्ति में स्वयं को लगा कर आप जन्म–मृत्यु के चक्र में ही उलझ रहे हैं। दूसरी ओर, जब आपका लक्ष्य अहंकार से ऊपर उठकर अन्तरात्मा

में व्याप्त ईश्वरेच्छा को उद्घाटित करना हो जाता है, तो आप आनन्द के मूल–परमानन्द को प्राप्त करते हैं। आपके जीवन का उद्देश्य भी यही होना चाहिए।

इस प्रकार का संकल्प विकसित करने के लिए आपको ईश्वर समर्पण का भाव उत्पन्न करना होगा तथा ईश्वरार्पण भाव के कारण निर्भयता, शान्ति और निश्चिन्तता का अनुभव करते हुए आनन्दित रहने की कला विकसित करनी होगी। ईश्वरीय योजना में कुछ भी गलत नहीं होता। यह जानकर आपके मन में निरन्तर आनन्द और प्रसन्नता के स्पन्दन बने रहना चाहिए।

साधक को अपने व्यक्तित्व में निर्भयता जैसे महान गुण का विकास करना आवश्यक है। चाहे परिस्थितियां कितनी भी विषम क्यों न हो, जाय भयभीत नहीं होइए। आपमें ईश्वरीय शाक्ति विद्यमान है। परमात्मा आपकी रक्षा कर रहे हैं। केवल आप निर्भयता का अभ्यास ही न करें बल्कि, अपने चतुर्दिक निर्भयता के स्पन्दनों को प्रसारित भी करें।

ईश्वर की प्रार्थना करने से चित्त शुद्धि होगी जो आपको लक्ष्य तक पहुँचाने में मार्गदर्शन देगी। "तनमें मनः शिव संकल्पमस्तु–"मेरे मन में शुभ संकल्प उत्पन्न हों।" यह एक वैदिक प्रार्थना है, जिसका अभिप्राय है—"आश्चर्यज़नक कार्यों को करने वाला यह मेरा मन शुभ संकल्पों से परिपूर्ण बने। छोटी–छोटी बातों में इसकी शक्ति विनष्ट न होवे।"

जब आप सुबह सोकर उठें तो अपने मन को इस प्रार्थना के भावों पर लगाये–"सर्वेषाम् स्वस्तिर्भवतु, सर्वेषाम् शान्तिर्भवतु, सर्वेषाम् पूर्णम् भवतु, सर्वेषाम् मंगलम् भवतु।" इसका अर्थ है–सबों का भला हो, सबों का शुभ हो, सबों को शान्ति प्राप्त हो, कोई भी दुखी न हो।"

यदि आप आत्मसाक्षात्कार के पथ पर आगे बढ़ रहे हैं, तो आपको अपने व्यक्तित्व के माध्यम से क्रियाशील अनन्त संकल्प शक्ति का स्रोत प्राप्त हो जायेगा। इस शक्ति से आपकी समस्त बाधायें समाप्त हो जायेगी। ऋणात्मक शक्तियां जब धनात्मक बन जायेंगी तो आप मानवता के कल्याण के लिए महान कार्य करने में सफल हो सकेंगे।



"मंत्रजप निश्चित रूप से परिणाम दायक होता है । आध्यात्मिक साधनाओं में यह सबसे सहज और अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रिया है। ईश्वर नाम के जप से अधिक मन को परिशुद्ध करने वाली कोई और विधि नही है।" ——

स्वामी ज्योतिर्मयानान्द

III

विचार

परिशोधन

जीवन में परिवर्तन की अनन्त संभावनायें हैं। चूँकि आप स्वरूपतः परमात्मन् हैं इसलिए आपके अन्दर असीम शक्ति और स्वतंत्रता के अनन्त आयाम विद्यमान हैं। आवश्यकता केवल सतत् प्रयास की है।

१

अपने जीव- को कैसे ब-लें

मानव जीवन में अनेक बदलाव होते है। शारीरिक, मानसिक स्थिति और भौतिक वस्तुयें बदलती रहती हैं। कभी–कभी ऐसा क्षण भी आता है, जब व्यक्ति अपने जीवन मे आमूल रूपान्तरण लाना चाहता है। वह तनावग्रस्त, चिड़चिडा, द्वेष और घृणायुक्त वही व्यक्ति नहीं रहना चाहता। वह उन दुर्गुणों से मुक्त होने की कामना करता है। वह धैर्यवान, सहनशील, उदार, हंसमुख और सन्तुलित व्यक्ति बनना चाहता है। अपने जीवन को इस रूप में परिवर्तित करने की कामना सचमुच बहुत प्रसंशनीय है। परिवर्तित होने की यह आन्तरिक इच्छा आत्मसाक्षात्कार की ओर जीवात्मा की यात्रा के आरंभ का परिचायक है।

दुर्गुणों को निर्मूल करना

आमूल परिवर्तन की कला सीखना बहुत महत्वपूर्ण है अन्यथा दबे हुए दुर्गुण और छुपी हुई पुरानी आदतें दूने वेग से व्यक्तित्व मे प्र... हो जाती हैं। अधिकांश लोगों को जीवन के गहरे रहस्य और सिद्धान्त का ज्ञान नहीं होता। इसलिए वे अपने दुर्गुणो को समाप्त करने के लिए अनेक प्रक्रियाओ को अपनाते हैं। कुछ लोग अपनी बुरी आदतो को दबाना या छ्पाना चाहते हैं।

अस्थाई रूप से कुछ गुणों को अपना कर कुछ लोग दुर्गुणो को ढ़कने का प्रयास करते हैं। कुछ व्यक्ति जिनमे क्रूरता, चिडचिडाहट, और अभिमान की प्रबलता होती है, वे कपटी सहानुभूति, दिखावटी करुणा और अत्यधिक विनम्रता प्रदर्शित कर उन्हे छुपाने का प्रयास करते हैं। परन्तु ऐसा करने मे वे सफल नही हो पाते। आप कटीली झाडियों को सुन्दर पुष्पों से सजा सकते है। उनकी शाखाओ और पत्तियो को काट सकते है। उन्हें काट–छांटकर छोटा भी कर सकते हैं। परन्तु जब तक इनकी जड़े पृथ्वी में हैं, तब तक वे पुन: उगती रहेगी। ठीक इसी प्रकार से आप अपने दुर्गुणों को परिवर्तित कर सकते है दबा सकते है अथवा सत्सग, स्वाध्याय, सेवा जैसे सद्‌गुणों के अभ्यास से छुपा सकते हैं, परन्तु जब तक आप उनकी जड को निकालने में सफल नहीं हो जाते, तब तक आपको उन से छुटकारा नही मिल सकता।

परिवर्तन और रूपान्तरण

यदि थोडे समय के लिए आप काम, कोध, लोभ, अहंकार क्रूरता और अन्य दुर्गुणों से दूर हो जाते हैं, तो आप केवल परिवर्तित हुए है। परन्तु जब आप इनको हमेशा–हमेशा के लिए अपने व्यक्तित्व से समाप्त कर देते हैं, तो आपने आध्यात्मिक रूपान्तरण कर लिया। यदि अपने बचपन के खिलौने में अब आपको आनन्द नही आ रहा है, तो आप केवल सतही रूप से परिवर्तित हुए है, क्योकि अब आपने अपना खिलौना बदल दिया है। अब दूसरें खिलौने मे आपको आनन्द आने लगा है। बाह्य वस्तुओं मे आनन्द खोजने की आन्तरिक दुर्बलता आपके व्यक्तित्व से नहीं गई है। परन्तु जब आप इस भ्रम से मुक्त हो जायेंगे तो आप रूपान्तरित हो गए।

आध्यात्मिक समझ के विकास और व्यक्तित्व में समन्वित सन्तुलन के कारण जब आपके जीवनमें गहरा बदलाव आता है, तो इसे आध्यात्मिक रूपान्तरण कहा जाता है। आप नई शक्ति, नई अन्तर्दृष्टि

और नवीन प्रेरणा से परिपूण. हो जाते है। अपनी दुर्बलताओ और दुर्गुणों को निर्मूल करने की प्रक्रिया मे आप अपनी अन्तरात्मा मे अधिक से अधिक विस्तार का अनुभव करते है।

आपका जीवन सफलता का एक संगीत बन जाता है, जो आनन्द, ऊर्जा और आध्यात्मिक प्रेरणा के प्रवाह मे गोते लगाने लगता है। परन्तु, अपने व्यक्तित्व की गहराई मे बदले बिना केवल वाह्य सम्बन्धो, परिस्थितियो, आचार–व्यवहार और वातावरण के स्तर पर परिवर्तित होंगे तो आपका जीवन नीरस, उबाऊ और बोझिल बन जायेगा।

साधारण क्लर्क पदाधिकारी बन सकता है। एक वकील आगे चल कर न्यायधीश बन सकता है। दर्शन शास्त्र का कोई विद्यार्थी कालान्तर में उस विषय का व्याख्याता हो सकता है। परन्तु व्यक्तित्व की गहराई मे वे वही पुराने व्यक्ति बने रहते है। जब अनकी रूचि की कोई वस्तु उन्हें नहीं मिलती तो वे आज भी वैसे ही दु:खी होते जैसे अपने जीवन की आरंभिक अवस्था मे हुआ करते थे। अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त कर वे आनन्द मे इतना मग्न हो जाते है, कि अपना होश–हवाश भी खो देते है। कभी–कभी आनन्दातिरेक में उनका मानसिक सन्तुलन भी समाप्त हो जाता है। वाह्य उपलब्धि और सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण उनके अनेक दुर्गुण छुप जाते है। परन्तु अपने स्वरूप की गहराई मे वे ज्यों के त्यों वही पुराने व्यक्ति बने रहते है। वाह्य परिस्थितियों और भौतिक उपलब्धि के कारण विकास के लिए उन्हें स्वस्थ परिवेश नही प्राप्त हो पाता। ससार और समाज द्वारा प्रदत्त भडकीली डिग्रिया और सम्मानों के आवरण में जो व्यक्ति अपने दुर्गुणों को छुपाते है, उनकी बुरी आदतें और अधिक अनियंत्रित हो जाती है। सामाजिक स्थिति और प्रतिष्ठा की आड मे वे अपनी बुराइयो को न केवल छुपाते बल्कि, सही सिद्ध करते हुए उन्हें तीव्र बना देते हैं।

उदाहरण स्वरूप मान ले कि कोई क्रोधी विद्यार्थी बडा हो कर प्रोफेसर बन गया है। अब वह अपने क्रोध को नियत्रित करने की आवश्यकता नही अनुभव करता। इसके विपरीत वह सोचने लगता है

कि विद्यार्थियो की भलाई के लिए कोध करने की· उसे छूट मिल गयी है। कभी–कभी उसकी इस कुप्रवृत्ति की निकृष्टतम अभिव्यक्ति होती है। परन्तु वह यह नहीं जानता कि ऐसा करके वह अपने ही विवेक के समक्ष अपनी मानहानि कर रहा है। अपनी चेतना की आवाज की अनसूनी कर यदि कोई व्यक्ति वाह्य आकर्षण और भ्रामक चमक को देखकर उसके अनुरूप कोई निर्णय लेता है, तो उसके जीवन मे आनन्द, सुख, शान्ति और सफलता की आशा नही की जा सकती।

इसके विपरीत अपने वाह्य स्वरूप में कोई परिवर्तन लाये बिना ही आप अपने आन्तरिक रूप को पूरी तरह बदल सहते हैं। वही पुराना क्लर्क रहते हुए भी आपका व्यक्तित्व वही नहीं रह सकता। आप वही किसान भले ही रहें परन्तु, अनेक दुर्बलताओं से युक्त कुछ वर्ष पूर्व वाले व्यक्ति नहीं हो सकते। यदि आप केवल सतही स्तर पर बदले हैं, तो आपका व्यक्तित्व वही रह जाता है। परन्तु जब आप आमूल रूप से रूपान्तरित हो जाते हैं, तो अपने अन्दर सतत प्रवाहित सार्वभौमिक जीवन प्रवाह से एकात्मता स्थापित कर लेते है। आपको अपने व्यक्तित्व में इसी आन्तरिक रूपान्तरण को लाने की आवश्यकता है।

अनियंत्रित इन्द्रियों और मनोजय के अभाव मे आपका जीवन वाह्य परिवर्तनों के आकर्षणों मे उलझ जाता है। इसके विपरीत योग को समर्पित जीवन आमूल रूप से रूपान्तरित होने की ओर अग्रसर होता है। वाह्य बदलाव ठीक वैसा ही है, जैसा लोहे के एंक टुकडे को विभिन्न आकृतियों में बदलना। परन्तु आध्यात्मिक रूपान्तरण तो लोहे को स्वर्ण मे बदलने के सदृश्य है। योग जिस परिवर्तन की घोषणा करता है वह है आपके व्यक्तित्व मे विद्यमान लौह तत्व विकृतियों को आन्तरिक विकास के चमकते स्वर्ण–दिव्य गुणों मे रूपान्तरण इस प्रकार जब आप स्वयं में आध्यात्मिक रूपान्तरण ला देते है, तो आपके सद्गुण और अधिक प्रखरता से चमकने लगते है। आप अपनी बुरी आदतो के दल–दल मे पुन नही फॅसते।

योग द्वारा व्यक्तित्व का विकास

सम्पूर्ण योग का अभ्यास कीजिये। इससे आपके सम्पूर्ण स्वरूप मे आमूल रूपान्तरण हो जायेगा। फिर भी आप रातों–रात किसी भी परिवर्तन की आशा न करे। अपने दैनिक जीवन मे समरसता, समता और सन्तुलन लाइये। आप के व्यक्तित्व का महल विवेक, भाव, सकल्प और कर्म के आधार स्तभों पर खडा है। व्यक्तित्व के इन चारों आधारस्तभो मे पूर्ण रूपान्तरण करने की आवश्यकता है। जब आपका विवेक अन्त प्रज्ञा की ज्योति से प्रकाशित होगा तो अन्य सभी अनुकूल परिवर्तन और कामनाये जिनकी आपको आवश्यकता है, स्वतः पूर्ण हो जायगी। जब तक आत्मा के स्वरूप मे आपको गहन अन्तर्दृष्टि नही हो जाती, तब तक परिवर्तन की सभी प्रक्रियायें अज्ञान पर आधारित अप्रबुद्ध मन पर निर्भर करती है।

आपके क्रियाशील जीवन में रूपान्तरण

कर्मयोग शारीरिक स्तर पर परिवर्तित होने की कला बताता है। इससे आप अहंकारिक सुख की भ्रामक भावना के बिना निष्काम होकर कार्य करने मे निपुणता प्राप्त कर लेते है। आप निरासक्त होकर इस दार्शनिक भाव से कार्य करते हैं, कि कर्म निरन्तर प्रवाहित जीवन सरिता की अभिव्यक्ति है। आध्यात्मिक रूप से जब आप रूपान्तरित हो जाते है, तो जगत कल्याण के कार्यो मे स्वय को लगा कर आपको आनन्द आने लगता है। स्वार्थ, लोभ, अहंकारिक तुष्टि और नश्वर भौतिक उपलब्धि की कामना के बदले आप नि स्वार्थ सार्वभौमिक प्रेम और समस्त सृष्टि के माध्यम से अभिव्यक्त ईश्वर की अनुभूति करने की आन्तरिक प्रेरणा से प्रेरित होकर कार्य करने लगते है। अपने गतिशील जीवन के स्तर पर आपको ऐसे ही रूपान्तरण के लिए प्रयास करना चाहिए।

आपके मानसिक जीवन में परिवर्तन

राजयोग मे ऐसी कई साधनाओं का वर्णन है, जिनके अभ्यास से आप अपने मानसिक जीवन को बदल सकते है। मन को "शैतान" का घर बनाने के बदले पवित्र मदिर बना सकते है। अपने विचारों को नियत्रित करने की कला सीखकर धारणा और ध्यान की सहायता से व्यक्तित्व की गहराई मे प्रविष्ट कर सकते है। समाधि की पारसमणि के स्पर्श होते ही आपको व्यक्तिगत इच्छा ईश्वरेच्छा–जो सबों के कल्याण के निमित्त उत्पन्न होती है, के साथ मिलकर एक हो जाएगी।

आपके भावनात्मक जीवन में परिवर्तन

भक्तियोग आपके भावनात्मक जीवन को ईश्वरीय प्रेम की दिव्य सरिता मे रूपान्तरित करने की कला सिखलाता है। प्रेम के नाम पर मोह और आसक्ति के भ्रामक जाल मे उलझाने के बदले, भक्तियोग आपको उस ईश्वरीय प्रेम की झलक दिखाता है जो सभी मानवीय प्रेम और सापेक्षिक जगत् के सम्बन्धों का आधार है। उपनिषद् की घोषणा है–"आत्मन् (ब्रह्म) के लिए ही सब कुछ प्रिय होता है।" इस सत्य की अनुभूति आपको हो जाती है। आप एक ऐसे आध्यात्मिक प्रेम मे डूब जाते है, जो न तो आता है और नही जाता है। जीव ईश्वर मे समाहित होकर शाश्वत माधुर्य और आनन्द का अनुभव करने लगता है। प्रेम की दिव्य भावधारा–जो सासारिक सम्मोह के कीचड और दलदल मे बहती थी स्वतत्रता की परिशुद्ध सरिता मे रूपान्तरित होकर अब परमानन्द सागर मे समाहित हो अपनी परम पूर्णता प्राप्त कर लेती है।

तार्किक बुद्धि से अन्तःप्रज्ञा तक

अन्त मे ज्ञानयोग के द्वारा आप अपनी बुद्धि को अन्त प्रज्ञा मे रूपान्तरित कर लेते है। व्यक्तित्व विकास की यह अन्तिम परिणति है। आध्यात्मिक गुरु के निर्देशन में सद्ग्रन्थों के श्रवण और उनके अर्थों का चिन्तन तथा ध्यान करने से साधक अपने व्यक्तिगत स्वरूप मे पूर्ण रूपान्तरण ला देता है। 'मै हाड–मास का बना यह शरीर हूँ' की अनुभूति के बदले उसे यह अनुभव होता है–"मै सार्वभौमिक आत्मन हूँ।" अहंकारिक दृष्टि के कारण मन की इच्छाओ की पूर्ति के पीछे भागने के बदले वह भ्रामक अहंकार के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लगा देता है। उसे जब यह अनुभव हो जाता है कि अविद्या के अधेरे मे अहकेन्द्र एक भटकते स्वप्न की तरह है, तो वह चेतना के उस दिवस मे जाग्रत हो जाता है, जहाँ उसे यह अनुभव हो जाता है कि वह स्वरूपतः आत्मन है। किसी प्रकार की कामना उसे प्रभावित नहीं कर सकती।

परिवर्तनों से परे

. अन्तः प्राज्ञिक ज्ञान वह अग्नि है, जिसमे व्यक्ति की बुरी आदतों की समस्त जडें जलकर भस्म हो जाती है। यह ऐसी पारसमणि है, जिसके स्पर्श से व्यक्तित्व के सभी स्तरों पर रूपान्तरण की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है। जीवात्मा का रूपान्तरण परमात्मा मे हो जाता है तथा मानव शरीर ईश्वर का जीवन्त मन्दिर बन जाता है। आप कब तक सतही स्तर पर बदलते रहेंगे? अपने व्यक्तित्व में गहन रूपान्तरण लाने का प्रयास कीज़िए। दैनिक जीवन मे निष्काम सेवा, भक्ति, ध्यान, चिन्तन और सत्संग का अभ्यास कीजिए। स्वय को परिशुद्ध चेतना– विवेक के नियत्रण मे लाइए। ज्ञान के प्रकाश से अपने जीवन को ज्योतिर्मय बनाइये। ईश्वरीय भक्ति की कोमल फुहारो का आनन्द लीजिए।

प्रफुल्लित मन के मधुमय परिवेश मे विहार कीजिए। आप निश्चित रूप से रूपान्तरित हो जायेगे। परिवर्तनों से परे अन्त प्राज्ञिक दृष्टि से आत्मा सभी प्रकार के परिवर्तन और रूपान्तरों से ऊपर है। काले बादलो के छॅटते ही सूर्य अपनी स्वाभाविक प्रखरता से प्रकाशित होते हुए ससार मे अद्‌भुत परिवर्तन ला देता है। बादल इन्द्रधनुषी रंग से रग जाते है। पेडो की नैसर्गिक हरितिमा प्रकट हो जाती और नदियों का जल रजत धवलता से प्रवाहित होने लगता है। इसी प्रकार आत्मसाक्षात्कार होते ही मनरूपी बादलो, भावनारूपी नदी, विचार रूपी पर्वत और दैनिक जीवन रूपी घाटियो में आश्चर्यजनक रूपान्तरण होता है। यद्यपि यह एक विरोधाभास है, कि आत्मा व्यक्तित्व मे आमूल रूपान्तरण लाती है परन्तु सन्त महात्माओं द्वारा उद्‌घाटित यही अन्त प्राज्ञिक ज्ञान है। अनन्त आत्मा के सनातन ज्ञान को प्राप्त कीजिए। आप में ही नहीं बल्कि समस्त ससार मे आध्यात्मिक रूपान्तरण लाने का यही रहस्य है। संसार मे जो भी सत्य, सुन्दर, शुभ और दिव्य है उसका आधार यही आध्यात्मिक रूपान्तरण । ईश्वरीय आशीर्वाद आपको प्राप्त हो ।



२

जी॰न की पाठशाल में

विज्ञान के क्षेत्र में मानवता को जो उपलब्धियॉ मिली है, उनको सोच कर आश्चर्य होता है। एक समय मनुष्यो की पकड से बाहर रहने वाले चन्द्रमा को मानव ने अपने पैरो तले रौंद दिया है। दिक्काल के कारण जो बाधा और सीमाये पहले अविजित सी लगती थी अब समाप्त हो गई हैं। इन सभी उपलब्धियो के पश्चात भी सबसे आश्चर्य की बात यह है कि आज का मानव अपने दैनिक जीवन की समस्याओ को समाप्त करने में असफल रहा है। पदार्थ के सबसे छोटे अश–अणु और परमाणु मे विद्यमान गुप्त रहस्यों को उद्घाटित करने वाला मानव अपने मन के रहस्यो और उसमें छुपी अद्भुत प्रतिभाओं को नही जान सका है।

अद्भुत बौधिक ज्ञान प्राप्त कर लेने वाला मनुष्य, अपने काम, कोध लोभ, अहंकार और मन के विभिन्न आवेगो को नियंत्रित करने मे पूरी तरह असफल रहा है। संक्षेप में उसे आज भी सच्चा सुख और शान्ति का अनुभव करने की कला ज्ञात नहीं है। जब तक इस कला में मानव प्रवीण नही हो जाता, तब तक उसकी सभी उपलब्धियॉ व्यर्थ है। उसकी सभी गौरवमयी महिमाये मिथ्या हैं। इसलिए साधक को चाहिए कि वह अपना ध्यान युगों–युगों से सन्त महात्माओं द्वारा उद्घोषित तथा समय–समय पर आज भी आत्मज्ञानियों और ऋषियो द्वारा प्रदर्शित मार्गो पर लगाए। हजारो वर्षो से महान योगियो ने जिस पथ का अनुगमन किया है, तथा जीवन की पाठशाला में जिन पाठों को पढा है, उसका सक्षिप्त वर्णन यहॉ दिया जा रहा है।

ऊँचा लक्ष्य निर्धारित कीजिए

यदि आप बाण से कोई लक्ष्य भेदन करना चाहते हैं, तो आपका निशाना लक्ष्य से थोड़ा ऊपर लगना चाहिये। यदि आप लक्ष्य से नीचे किसी केन्द्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे तो लक्ष्य भेदन नहीं हो पायेगा। ठीक इसी प्रकार यदि इस संसार में आपका लक्ष्य केवल विषय भोगों को प्राप्त करने का है, तो निराशा और असफलता के अतिरिक्त आप और किस चीज की आशा करते हैं? दूसरी ओर यदि आपके जीवन का उद्देश्य अन्तर्मन में स्थित ब्रह्माण्डीय जीवन स्रोत से एकत्व बनाना हो जाता है, अर्थात जब आप कृष्ण अथवा क्राइस्ट से एकात्मता स्थापित करने या आत्मसाक्षात्कार प्राप्ति का लक्ष्य अपने सामन रखते हैं, तो आप जो भी करेंगे उसमें अद्भुत सुन्दरता और आकर्षण उत्पन्न हो जायेगा।

धार्मिक बनिए

गीता में भगवान श्रीकृष्ण की घोषणा है–'यतो धर्मस्ततो जयः' अर्थात् जहाँ धर्म है, वहीं विजय है। सच्ची विजय मन और इन्द्रियों को नियंत्रित करने में सन्निहित है। इससे आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति होती हैं, जो जन्म–मृत्यु के चक्र को समाप्त कर देता है।

दूसरों को धार्मिक बनने के लिए दबाव नहीं दीजिए। अपने जीवन का उदाहरण प्रस्तुत कर उन्हें धार्मिक बनने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। अपने हृदय मे धर्म कों जड़ों का दृढ़ता पूर्वक स्थापित किये बिना यदि आप संसार को धार्मिक बनाने के लिए अधिक उत्सुक हो जायेंगे तो आपका प्रयास पाखण्ड बन जाएगा जिसका परिणाम ऋणात्मक होगा। गीता, बाइबिल और अन्य सद्ग्रन्थों के गहन अध्ययन से धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझिये। यह अध्ययन एक सद्गुरु के निर्देशन

में होना चाहिये तभी आप धर्म के यथार्थ रूप को ज्ञात कर सकेगे अन्यथा आप तथाकथित धार्मिक गुरुओं के चँगुल में फँसकर धर्म के विषय में भ्रामक और संकीर्ण धारणा बना लेंगे।

सतत् क्रियाशील रहिए

. चंचल झरना, नदियों की सतत प्रवाहित धारा और जल प्रपातों के अहर्निश गिरते जल से यही शिक्षा मिलती है कि जहाँ जडता, स्थिरता और निष्क्रियता है वही विकृति, सड़ाँध और मृत्यु है। परन्तु जहाॅ निरन्तर क्रियाशीलता और गतिशीलता है वहीं रचनात्मकता, प्रफुल्लता और शक्ति है। जीवन से अवकाश प्राप्त करने की योजना बनाने के बदले विभिन्न प्रकार के निष्काम कर्मो के माध्यम से आनन्द लेने की कला सीखिये। कर्मयोग के भावों से अनुप्राणित होकर अपने जीवन को निःस्वार्थ भावना के रोमांच से परिपूर्ण कीजिए। यह सोचने के बदले कि "अपने जीवन को और अधिक सुखी, समृद्ध और सुरक्षित बनाने के लिए मुझे क्या करना चाहिए" यह सोचिये कि 'मैं अपने आस–पास के लोगों की सेवा कैसे कर सकता हूँ मैं दूसरों के हृदय में सुख, शान्ति, समृद्धि और संतोष के पुष्पों को कैसे प्रस्फुटित कर सकता हूँ ?"

जब आप एक बार निःस्वार्थ भावना से उत्पन्न आनन्द का रसावादन कर लेंगे तो अहंकेन्द्रित जीवन की संकीर्ण सीमाओं मे ही नही आबद्ध रहेंगे। सच्ची सफलता और समृद्धि का यही महानतम रहस्य है। जहाँ दृष्टि निम्न स्वरूप तक सीमित होती है वहीं निराशा और दुःख है।

परन्तु, जब व्यक्ति का दृष्टिकोण निम्नस्वरूप से ऊपर हो जाता है वही दिव्य गुणो के दुर्लभ पुष्प प्रस्फुटित हो जाते है।

द्रष्टा बनिए

अनासक्त बनने की कला सीखिये। अनासक्ति की सही समझ जब आपको हो जायेगी तो आप दूसरों की समस्याओं के प्रति उदासीन नहीं होंगे। इसके विपरीत अनासक्ति से आपको एक आश्चर्यजनक आध्यात्मिक आभा प्राप्त हो जायेगी। अनासक्ति ऊँची उडान भरने के समान है। आप जितनी ऊँचाई पर उड़ान भरते हैं, आपको उतना ही विस्तृत क्षेत्र दिखाई पड़ने लगता है। यदि आप जीवन की व्यावहारिक वास्तविकता से ऊपर उड़ने में असमर्थ हैं, तो आप वैसे व्यक्ति के समान हैं, जो एक छोटी सी कोठरी में कैद रहकर प्रकृति की अनुपम सुन्दरता, विस्तार और दृष्यों को देखने से वंचित रह जाता है।

इस सत्य को अच्छी तरह जान लीजिए कि यह संसार एक रहस्यमय सृष्टि है। वेदान्त की इस घोषणा का स्मरण कीजिए–"कुछ भी मेरा नहीं है। वास्तव में संसार का अस्तित्व ही नहीं है।" इस प्रकार रंगमंच पर नाटक खेलने वाले एक अभिनेता के समान जीवन व्यतीत कीजिए। यहाँ एक विशेष सावधानी रखने की आवश्यकता है। ध्यान, साधना और प्रार्थना के द्वारा अपने मन के स्तर को जब आप उन्नत बना लेंगे तो आपको इस संसार में उतनी ही अधिक विसंगतियां और कंष्ट दिखाई पडने लगेगा। ऐसा अनुभव स्वाभाविक भी है। आप में जैसे–जैसे आध्यात्मिक सुग्राहकता बढ़ती जायेगी वैसे–वैसे व्यर्थ की गपबाजी, चुगली, दिखावटी प्रेम, व्यर्थ का वाद–विवाद जो कभी बड़ा स्वाभाविक लगता था वही कष्टदायक प्रतीत होने लगता है। इसलिए जब आप योगपथ पर प्रगति करने लगते हैं, तो आपको दोनों स्थितियों में सन्तुलन बनाये रखने की आवश्यकता होती है। एक ओर आन्तरिक विकास के द्वारा अपने भ्रम और अज्ञान के आवरणों को विनष्ट कर एक उन्नत्त स्थिति बनायें और दूसरी ओर सांसारिक लोगों के भ्रम और अज्ञानता के साथ सहनशीलता तथा धैर्य भी विकसित करें। इस प्रकार

आप अपनी आन्तरिक उच्चस्थिति तथा लोगों के व्यावहारिक आचरण के साथ सामजस्य और तालमेल बैठा सकते हैं। 'अनासक्ति को अभ्यास में बदलिये और अनुकूल बनिये' के सिद्धान्त को अपनाना अत्यन्त आवश्यक है।

भक्ति के अमृत का आस्वादन कीजिए

हृदयस्थ परमात्मा के साथ जब सच्ची लगन लग जाती है तभी संसार से पूर्ण विरक्ति संभव है। उपनिषद की इस महान घोषणा का स्मरण कीजिये—"आत्मन के लिए ही सब कुछ प्रिय होता है। आप की अन्तरात्मा ही अमृत है।" व्यक्ति के सभी प्रयास और प्रेरणाये अन्तर्निहित परमात्मा की अनुभूति द्वारा परमानंद प्राप्त करने की ही अभिव्यक्ति हैं। आपके जीवन के माध्यम से ईश्वरेच्छा क्रियाशील हो रही है। इसे देखने की दृष्टि उत्पन्न कीजिये। जब सुख, समृद्धि और सफलता मिले तो इसका श्रेय अपने अहंकार को नहीं दीजिए।

इसके विपरीत इस स्थिति में ईश्वरीय कृपा को क्रियाशील होते अनुभव कीजिए। परमात्मा को धन्यवाद दीजिए। जब विषम स्थिति आये तो प्रतिपल संरक्षण देने वाली ईश्वरीय अनुकम्पा को नहीं भूल जाइये। जिसे आप विपत्ति समझ रहे हैं, वह छुपे रूप में आपके लिए वरदान है।

परमात्मा ने यह सृष्टि ऐसी बनाई है कि व्यक्ति के जीवन में जो भी घटित होता है वे सभी के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण है। आपके लिए यह आवश्यक है कि आप एक ऐसी दृष्टि विकसित करें जो सृष्टि में सर्वत्र ईश्वरीय महिमा का ही दर्शन करे। ऐसी दृष्टि आप जप के अभ्यास से विकसित कर सकते हैं। किसी मंत्र, ईश्वर का कोई नाम अथवा छोटी सी प्रार्थना को श्रद्धा और भक्ति के साथ जपने का अभ्यास कीजिए। जप के समय ईश्वरीय विद्यमानता का अनुभव करें साथ ही ऐसी भावना उत्पन्न करें कि सर्वव्यापी,

सर्वशक्तिमान, करुणामय परमात्मा ने आपको अपनी गोद मे ले रखा है। जिस प्रकार कोई बालक मिठाई का आनन्द लेता है वैसे ही आप ईश्वरीय नाम के जप के माधुर्य का आनन्द लें।

यदि जप के बदले में कोई विशेष प्रकार की इच्छा पूर्ति करना चाहते हैं, अथवा किसी घटना को अपनी इच्छानुसार घटित होने की आशा रखते हैं, तो आपमें भक्ति की दिव्य भावना का अभाव है। क्या ईश्वर आपकी आवश्यकताओं के विषय में नहीं जानते हैं? इसलिए मंत्र जप के समय अपने मन को कोई फल प्राप्ति की इच्छा के दबाव से क्यों बोझिल बनाते हैं? इसके विपरीत, जप से उत्पन्न रहस्यमय माधुर्य का आस्वादन करते हुए अपनी आत्मा को आध्यात्मिक शक्ति से पुष्ट कीजिये।

वीर बनें

आराम का जीवन व्यतीत करने की इच्छा नहीं करें। इस सन्दर्भ में महाभारत की एक बड़ी अद्‌भुत कथा प्रसिद्ध है। महाभारत की रणभूमि में भीष्म पितामह घायल होकर बाण शैय्या पर पड़े थे। वे मरे नहीं थे, परन्तु युद्ध करने में असमर्थ थे। कई लोगों ने उन्हें आराम से सोने के लिए कोमल तकिया देने का प्रयास किया। परन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया। तब अर्जुन ने पृथ्वी में तीन बाण मारकर उनके सिर के लिए तकिया बना दिया। उनके जैसा महावीर के लिए यही तकिया सर्वथा अनुकूल थी। अतः वे इससे अत्यन्त प्रसन्न हुए। इस कथा का संदेश यही है कि साधक को इस जीवन संग्राम में निरन्तर एक योद्धा बना रहना चाहिए। उसे निष्क्रियता और भोग विलास के जीवन की ओर नहीं आकृष्ट होना चाहिये। क्योंकि ऐसा करना वीरता नहीं, बल्कि कायरता है। अहंकारिक इच्छा के आधार पर यदि आप आराम और सुखद् जीवन के प्रति अत्यधिक सचेत हो जायेंगे तो आपको परम सुख, शान्ति और प्रबुद्धता प्रदान करने वाला आध्यात्मिक संकल्प नहीं प्राप्त हो पायेगा।

सत्संग कीजिए

भीड और शोर भरे शहर में रहने वाला व्यक्ति जब किसी शान्त, सुन्दर और विस्तृत वन्य प्रदेश में जाता है तो उसे एक आश्चर्यजनक आनन्द का अनुभव होता है। समस्त वातावरण उसे सुखद प्राणदायी और प्रेरक प्रतीत होने लगता है। वह स्वयं को तनाव रहित अनुभव करता है। ठीक इसी प्रकार सत्संग से प्राप्त जब सद्विचारों के अनन्ताकाश में आप विचरण करने लगते हैं, तो आपको एक अद्भुत आनन्द का अनुभव होता है। सत्संग के दो पहलू हैं। एक है प्रबुद्ध सन्त द्वारा गीता, उपनिषद् तथा अन्य सद्ग्रन्थों की व्याख्या सुनना। यदि इस प्रकार का प्रत्यक्ष सत्संग मिलना संभव न हो तो दूसरा पहलू है – सन्तों द्वारा रचित ग्रन्थों तथा शास्त्रों का स्वाध्याय करना। इस प्रकार आध्यात्मिक विचारों के सुन्दर उपवन में विचरण करने का आनन्द प्राप्त करेंगे। एक बार जब आपको सत्संग का आनन्द प्राप्त हो जायेगा तो आप इसे एक दिन के लिए भी नहीं छोड़ना चाहेंगे। अपने जीवन को सत्संग सरिता में डुबो दीजिए। शीघ्र ही आप दूसरों के लिए सत्संग का केन्द्र बन जायेंगे।

दैनिक जीवन में सन्तुलन और समरसता लाइए

अपने दिन का शुभारम्भ प्रेरक प्रार्थना और निरभ्र ध्यान से करें। उत्तरादाइत्वों के सम्पादन के लिए हठयोग आसनों के अभ्यास से अपने शरीर को तैयार करें। अनासक्ति की आनन्दमयी भावना के साथ अपने कर्तव्यों का पालन आरंभ करें। बीच–बीच में जब भी अवकाश मिले मन को मन्त्र जप में संलग्न कीजिए तथा ईश्वरीय प्रेम तथा भक्ति की सरिता में गोते लगाइये। सद्गुणों को विकसित कीजिए। अपने सम्पर्क के लोगों की आवश्यकताओं तथा मानसिक बनावट के साथ सामंजस्य

और अनुकूलनशीलता विकसित कीजिए। कुछ समय स्वाध्याय, सत्संग और गुरु सेवा के लिए अवश्य निकालिए। जब आप सोने जाये तो हस जिस प्रकार से सरोवर में विहार करने के पश्चात पंखों को फड–फड़ाकर मुक्त गगन में उड़ जाता है, वैसे ही आप सभी सांसारिक विचारों को मन से अलग कर दे। इस प्रकार अनन्तता और यदि अपने जीवन को समता पूर्वक जीते हुए परमात्मा की ओर जाने की एक प्रक्रिया बना देंगे तो आप मानव जीवन में विद्यमान रोमांच को उद्घाटित कर आश्चर्य चकित रह जायेंगे। आप स्वयं कल्पना कर सकते हैं, कि जो लोग इस जीवन को पूर्णता और समग्रता में जीते हैं, उनके लिए इसमें कितना आनन्द और सुख छुपा है?

ईश्वरीय अनुकम्पा से आप जीवन की पाठशाला में इन अध्यायों को पढ़कर अपने आपको आध्यात्मिक समृद्धि से सम्पन्न कर संसार में सुख, शान्ति, सामंजस्य और समता का विस्तार करें।



३

समस्याओं को कैसे सुलझायं

मानव जीवन समस्याओं से भरा है। बाल्यावस्था से मृत्यु पर्यन्त व्यक्ति को अनेक प्रकार की समस्याओं से लड़ना पड़ता है। स्वास्थ्य की समस्या, पारस्परिक सम्बन्धों की समस्या, इच्छाओं के कारण समस्या, ज्ञान और प्रभुता की समस्या हमारे सामने प्रतिदिन आती रहती हैं।

कभी–कभी व्यक्ति को ऐसा लगता है, कि उसकी समस्याओं का समाधान मिल गया है। परन्तु, शीघ्र ही वे समस्यायें पुनः दूसरे रूप में प्रकट हो जाती हैं। कुछ समस्यायें दब जाती है, कुछ का समाधान तो हो जाता है परन्तु इसके स्थान पर दूसरी नई समस्या उत्पन्न हो जाती है और कभी–कभी कुछ समस्यायें जीवन में कई और जटिलताओं का रूप लेकर सामने आ खडी हो जाती हैं। आत्मा के वास्तविक स्वरूप तथा इस नश्वर संसार से परे शाश्वत लक्ष्स तक पहुँचने के विषय में गहन अन्तर्दृष्टि उत्पन्न किए बिना किसी भी समस्या का ठीक –ठीक और गहन समाधान प्राप्त करना संभव नहीं है। जब व्यक्ति अपनी समस्याओं को ठीक ढंग से सुलझाने की कला जान लेगा तो उसका जीवन सुख, शान्ति और आनन्द का शाश्वत स्रोत बन जाएगा।

समस्याओं की मनोवैज्ञानिक पृष्ठ भूमि

जब आपके समक्ष कोई समस्या आती है तो आपका मन उद्विग्न हो जाता है। यदि आपका मन शान्त, संतुलित और निरभ्र हो तो उसको कही भी कोई वास्तविक समस्या नहीं दिखाई पडेगी।

जिस प्रकार काल्पनिक प्रेत का अस्तित्व अंधेरे में ही रहता है, वैसे ही द्वंद्वों में उलझे हुए मन में ही समस्यायें उत्पन्न होती हैं।

जब आपका मन रजस और तमस के प्रभाव में रहेगा तो आप स्वयं को निरन्तर समस्याओं से घिरा हुआ पायेंगे। ज्यों ही आपके मन पर सात्विकता का प्रभाव प्रबल होगा समस्याओं से उबरने का मार्ग दिखाई पड़ने लगेगा। सात्विक प्रभाव से आपको एक ऐसी अन्तःप्राज्ञिक दृष्टि प्राप्त हो जाएगी जिसके समक्ष सभी समस्यायें धूप में आए कुहासे की तरह समाप्त जायेगी।

यदि आप अपने मन को विवेक की परिशुद्ध किरणें और भक्ति की सुखद फुहारों से वंचित रखेंगे तो निश्चित रूप से आपके जीवन में उलझाने वाली समस्याओं की कंटिली झाड़ियाँ उत्पन्न हो जाएगी।

समस्याओं का दर्शन

जिस प्रकार चक्रावात गोल घूमने वाले तूफान का केन्द्र होता है, उसी प्रकार निरन्तर व्यग्रता पूर्वक घूमने वाला मन भी एक भ्रमण केन्द्र का निर्माण कर लेता है जिसे समस्या कहा जाता है। मन जितना अधिक घूमता है समस्या की तीव्रता भी उतनी ही अधिक होती है।

वास्तव में समस्या का कोई अस्तित्व नहीं है। अविद्या के प्रभाव में मन को समस्यायें दिखाई पड़ती हैं, और यह उनके साथ एक संघर्ष में उलझ जाता है। जब आप गहरी नींद में सो जाते हैं, तो कोई भी समस्या नहीं होती। जागते ही आप अपने मन के साथ तादात्म्य बना

लेते हैं। मन के साथ तादात्म्य बनाना ही सभी समस्याओं का मूल आधार है। अज्ञानवश आप सांसारिक चीजो में मूल्य स्थापित कर देते हैं। आप इनका ही चिन्तन बार–बार करते हैं। अहंकारिक दृष्टि से किसी वस्तु का निरन्तर चिन्तन करने के कारण उससे आन्तरिक आसक्ति उत्पन्न हो जाती है। आसक्ति से अनेक प्रकार की इच्छायें, कामनायें उत्पन्न होती हैं।

इच्छाओ से अहं और अधिक प्रबल होता है। परिणामतः जीवन में अहंकारिक दृष्टिकोण की ही प्रबलता हो जाती है जिससे अहं और अधिक परिपुष्ट हो जाता है। इस कारण सम्मोह और क्रोध उत्पन्न होता है जिससे बुद्धि की सुग्राहकता समाप्त हो जाती है। विवेक ज्योति के अभाव में मानव व्यक्तित्व को समस्याओं का भूत निरन्तर डराता रहता है।

ब्रह्म या अन्तरात्मा सभी प्रकार की समस्याओं से मुक्त है। मानसिक सरोवर में इसकी जो प्रतिछाया है उसे जीवात्मा कहते हैं। यह स्वयं को मन, प्राण और भौतिक शरीर से निर्मित व्यक्तित्व के साथ संलग्न कर अपने वास्तविक ब्रह्म स्वरूप को भूल जाता है। अप्रबुद्ध अहं और आन्तरिक अज्ञानावरण पर ही सभी समस्यायें आधारित हैं। अज्ञान किसी समस्या का बीज तथा अहंकार इस बीज से निकला अंकुर है। समस्याओं से भयभीत होने के बदले उनका दृढ़ता पूर्वक सामना कीजिए। मन को शान्त रखिए। आपको शीघ्र ही अपनी समस्या का प्रभावकारी समाधान दिखाई पड़ेगा और बाद में आप अनुभव करेंगे कि वास्तव में समस्या तो थी ही नहीं। जब आपकी दृष्टि सीमित होती है तो आप किसी भी स्थिति को व्यापक दृष्टिकोण से नहीं देख सकते। सीमित दृष्टि से जो ऋणात्मक जान पड़ता है वही विस्तृत दृष्टिकोण से धनात्मक हुआ करता है। जीवन में आई विपरीतावस्थाओं के पीछे जो दिव्य ईश्वरीय उद्देश्य छुपा है उसे जब समझने लगेंगे तो आप उन्हें समस्या मानकर उनसे दूर भागने का प्रयास नहीं करेंगे। आप अपनी परिशुद्ध अन्तःप्रज्ञा से मार्गदर्शन प्राप्त कर अपनी समस्याओं का प्रभावी हल खोज निकालेंगे।

समस्याओं को सुलझाने की विधियाँ

सत्सग, स्वाध्याय और सेवा के द्वारा जीवन में आध्यात्मिक समझ विकसित करे। मन की सकीर्ण सीमाओ से ऊपर उठे। सार्वभौमिक जीवन की स्फूर्तिदायक वायु मे सास ले। आपका आन्तरिक जीवन जब ज्ञान की प्रबल ज्योति से प्रकाशित हो जाएगा तब हृदय के सरोवर मे समस्याओं के कीडे नही उत्पन्न होगे।

विकट स्थिति उत्पन्न होने पर उत्तेजित न होवें। प्रार्थना करें, समर्पण भाव विकसित करें और तनाव रहित बनें। धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करें। अपनी समझ और शक्ति के अनुसार अपने कर्तव्यों का सर्वश्रेष्ठ ढंग से पालन करें। आप पायेगे कि विकट समस्याओ के अँधेरे में भी एक रहस्यमय हाथ आपको मार्ग दर्शन प्रदान कर रहा है। प्रतिदिन ध्यानाभ्यास करे। विक्षिप्त मन ही सभी समस्याओं का स्रोत है। धारणा और ध्यान से आप अचेतन और अबचेतन मन को प्रशिक्षित करते है। इस कारण किसी समस्या से भ्रमित हुए बिना ही आपका अचेतन मन आपके लिए इसका समाधान खोजने में लग जाता है। तनावग्रस्त जीवन समस्याओ को और अधिक जटिल बना देता है, जबकि तनाव रहित शान्त जीवन समस्याओं को पानी के बुलबुले तोड़ने के समान सहजता से समाप्त कर देता है।

सद्ग्रन्थों का श्रवण, आध्यात्मिक स्वरूप के चिन्तन और अद्वैत ब्रह्म पर ध्यान के द्वारा अपने वास्तविक स्वरूप को उद्घाटित कीजिए। परमात्मा अनन्त ज्ञान, शान्ति और शक्ति से परिपूर्ण है। उसे क्या कोई समस्या प्रभावित कर सकती है? आप वही दिव्य परमात्मा हैं।

ज्ञान ज्योति से अविद्या के अधेरे को विनष्ट करें। आप वैयक्तिकता की समस्याओ से मुक्त हो जायेंगे। आप हमेशा–हमेशा के लिए दु:ख और चिन्ताओ को समाप्त कर देंगे। ईश्वरीय आशीर्वाद आपको प्राप्त हो।

४

सा-। जीवन उच्च विचार

"सादा जीवन उच्च विचार' सभी गुह्य एव आध्यात्मिक गतिविधियों का आधार है। सादा जीवन और उच्च विचार इन दोनों सिद्धान्तो का क्रियान्वयन साथ–साथ होना चाहिए। यदि कोई सादा जीवन जीने मात्र के लिए जीवन व्यतीत कर रहा है तो उसे सादा जीवन नहीं कहा जा सकता। सादा जीवन एक साध्य के लिए साधन है जिसके माध्यम से उच्च विचार का अभ्यास होना चाहिए। यदि ऐसा हुआ तभी सादा जीवन अधिकृत और पूर्ण होगा।

जटिल जीवन तुच्छ चिन्तन

इसे सहज रूप से समझने के लिए सादा जीवन और जटिल जीवन के बीच स्पष्ट रेखा खीचकर इन दोनो को अलग–अलग देखना होगा। अधिकांश लोग जटिल जीवन व्यतीत करते है। जटिल जीवन का अर्थ है घर में असमजस्य और असतुलन, पारिवारिक सदस्यो और मित्रो को झूठे वायदे करना, कुसंगति तथा व्यर्थ के लोगो से उद्देश्यहीन सम्पर्क, अनैतिक व्यवहार, आडम्बर, मिथ्याभिमान, आत्मनिर्मित झूठी गरिमा तथा अधिकाधिक भौतिक समृद्धि की अतृप्त तृष्णा। इस जगत

मे अनेक आकर्षक और दिखावे की वस्तुये है, जैसे--बहुमूल्य टाइया, महगे सूट, तथाकथित बड़े लोगो का समाज इत्यादि। जटिल जीवन की यह एक सामान्य रूप रेखा है जिसमें अधिकाश लोग जी रहे है।

जहॉ जटिल जीवन होगा वहॉ तुच्छ विचार होगे। ऐसे लोगो की सोचावट बहुत निम्नस्तरीय हो जाती है। लोग अपने मानसिक स्वास्थ्य की कोई चिन्ता नही करते। उनके मन में काम, क्रोध, द्वेष, अहकार भरा होता है। जहॉ ऐसी तुच्छ भावनाये होंगी वहॉ जीवन प्रवाह अवरुद्ध हो जाएगा। ऐसे व्यक्तियो का भविष्य अँधकारमय हो जाता है।

सादगी और उत्कृष्टता

दूसरी ओर सादा जीवन व्यतीत करने का सद्‌विचार तभी उत्पन्न होता है जब व्यक्तित्व का समन्वित विकास उत्कृष्ट हो जाता है। जो लोग अपनी प्रसुप्त शक्ति को जाग्रत करना चाहते हैं, जिनके लिए आध्यात्मिक मूल्यों का कुछ महत्व है, जो अच्छी तरह जानते हैं, कि मानसिक शान्ति की तुलना में वाह्य उपलब्धियो का कोई महत्व नहीं, संतोष जिनके लिए सर्वश्रेष्ठ धन है तथा जो आध्यात्मिक मूल्यों को भौतिक उपलब्धि से अधिक मूल्यवान मानते हैं, वे सादा जीवन और उच्च विचार की ओर आकर्षित होते है। महात्मा गॉधी ने ऐसा ही जीवन व्यतीत किया। उनकी सारी शिक्षाओं का सार यही था कि जितना संभव हो उतना सादगी का जीवन व्यतीत किया जाय।

मिथ्या सादगी

सादगी को किसी लक्ष्य प्राप्ति के लिए साधन होना चाहिए न कि यही साध्य बन जाय। सादगी के नाम पर लोग सीमा का अतिक्रमण कर देते हैं। उदाहरण के लिए एक आश्रम का अन्तेवासी नौ वर्षो तक

एक ही कमीज पहनता रहा। जब कभी कोई व्यक्ति उससे मिलने आता तो वह यही कहता–''देखिए, मै पिछले नौ वर्षों से एक ही कमीज पहन रहा हूँ। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है?' किसी के पास ताड का एक पंखा पॉच वर्षों से हो और वह यह कहे ''लोग दो महीनो मे ही पंखे तोड देते है, मै पिछले पांच वर्षों से इसी पखा से काम चला रहा हूँ। क्या यह सादगी नही है?'' बहुतों के लिए यह आश्चर्यजनक उदाहरण हो सकता है, परन्तु, ऐसी सादगी के साथ 'सादा जीवन' व्यतीत करने का जो अहंकार है वह बहुत तीव्र है। ऐसे लोगो की शक्ति सादगी के परिणाम स्वरूप लोगों से वाह–वाही, यश और शाबाशी लेने मे ही खर्च होती है।

. एक दूसरा उदाहरण भी है बरसात के दिन मे एक राजा ने किसी सन्त को अपने राज दरबार मे आमत्रित किया। महल मे उनके लिए आरामदायक बिछावन लगा दिया गया जिससे उन्हे सुखद नीद आए। परन्तु सन्तजी तो साधु थे। वे भला राजा के पलग पर कैसे सोते। उन्होने पुआल लाने का आदेश दिया। राजा को बडी परेशानी हुई। कई सेवक इधर–उधर दौडाए गए। घन्टो बाद जब पुआव लाया गया तो सन्तजी सोए। यह सत्य घटना है। यह केवल शाब्दिक अर्थों मे सादगी के अभ्यास का उदाहरण है।

निर्लोभी बनना

वास्तविक सादगी तो यम और नियम विशेषकर अस्तेय और अपरिग्रह के अभ्यास में है। अस्तेय के अभ्यास मे योगी किसी दूसरे व्यक्ति की कोई भी वस्तु बिना उसकी अनुमति के किसी चालाकी अथवा अनैतिक रूप से नही लेता। इसके अतिरिक्त लोभ की जो सूक्ष्म संभावनाएँ हैं, उनसे भी वह बचने का प्रयास करता है। किसी को सोने की चैन वाली घडी पहने देखकर यदि आपके मन में यह भाव आता है 'काश मैं भी ऐसी ही घडी पहनता' तो मानसिक रूप से आपने जो

वस्तु आपकी नहीं है उसे दूसरे की अनुमति के बिना ले लिया। दूसरो की चीजों को लेने की जब भावना होती है, तो लोगो को यह ज्ञात नही हो पाता कि वास्तव में उनके पास क्या होना चाहिए। परन्तु जब वह दूसरे के पास कोई चीज देखते है, तो उनके मन मे भी उसे लेने की सूक्ष्म कामना जाग्रत हो जाती है। जो दूसरों के पास है वह उनके पास होना चाहिए। यही स्तेय है। यह एक विचित्र प्रकार की चोरी है। अपरिग्रह, निर्लोभी बनने के गुण को कहते है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति कम से कम वस्तुओ का संग्रह करते हुए जीवन व्यतीत करता है। अस्तेय में व्यक्ति दूसरे की वस्तुओ को नही लेता है

जब कि अपरिग्रह ऐसा सद्‌गुण है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति उन सारी वस्तुओं का स्वेच्छा से सग्रह नहीं करता, जिन्हें नैतिक और वैधानिक तौर से लेने का अधिकारी नही होता है। वह अपनी माग और आवश्यकताओ को कम कर देता है। अहकारिक तुष्टि के लिए वह किसी वस्तु का संग्रह नहीं करता। अपरिग्रह के अभ्यासी के समक्ष लक्ष्य रहता है कि इस नश्वर ससार की वस्तुओ का वह कम से कम संग्रह करे। अपनी आंखो के समक्ष ही विनष्ट होते देखने के लिए बहुत सारी चीजों का सग्रह करने से क्या लाभ? इसके विपरीत जितनी आवश्यकता हो उतना ही सग्रह किया जाए। पाश्चात्य विचार धारा के यह ठीक विपरीत है। वहॉ के लोगों की यही मान्यता है कि जितना अधिक से अधिक संग्रह हो, जितना विलासिता पूर्ण जीवन व्यतीत किया जाय उतना ही अच्छा है। वहॉ कौन कितना संग्रह करता है इसकी होड लगी हुई है। परन्तु जीवन का लक्ष्य–आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को थोडी सी चीजों की आवश्यकता होती है।

मानवता की सेवा

एक न एक दिन सबों को इस संसार से विदा लेना है। तो फिर इसी बीच ऐसी चीजों के सग्रह में समय क्यो व्यर्थ किया जाय जिसे अपने साथ ले नही जाया जा सकता है? सारी चीज यही रह जायगी।

एक जगह से दूसरी जगह सोने की ईट को आते–जाते देखने मे ही क्यो समय गवाया जाय? परन्तु दूसरी ओर यदि अपने वैभव से मानवता की सेवा करने का आदर्श किसी के समक्ष है, यदि किसी मे यह भावना गहराई से बैठ चुकी है कि वास्तव मे वह किसी वस्तु का स्वामी नही, कोई भी चीज उसकी नही है, तो समस्त ससार की समृद्धि रखने वाला व्यक्ति भी अपरिग्रही हो सकता है। यह जानते हुए कि सब कुछ परमात्मा का है वह अपनी सम्पत्ति और समृद्धि का उपयोग मानवता की सेवा मे करता है। इस प्रकार सब कुछ रहते हुए भी व्यक्ति सादगी का जीवन व्यतीत कर सकता है।

वाह्य समृद्धि और आन्तरिक सादगी

सादगी के इस सिद्धान्त पर ससार के अनेक महामानवों ने अपना जीवन व्यतीत किया है। भारत मे १६वी और १७वीं शताब्दि में अनेक महान् राजा हुए थे। उनमें से ही एक थे नसरूद्दीन अली। एक ओर वे भारत के शासक थे दूसरी ओर उनका निजी जीवन अत्यन्त सादा था। उनकी पत्नी कपड़े बुनती थी और वे स्वयं लिपिक का कार्य करते थे। राजकाज के कार्य से जब उन्हें समय मिलता तो वे अपने जीवन यापन के लिए यही काम कर लिया करते थे।

एक दिन उनकी पत्नी का हाथ जल गया। वे दर्द से चिल्लाते हुए नसरूद्दीन अली से बोली "खजाने से आप कुछ पैसे क्यो नहीं ले लेते, जिससे हमलोगों का ठीक ढंग से गुजारा चले परन्तु नजरूद्दीन ने कहा कि खजाना उनका नहीं, बल्कि लोगों का है। अपनी योग्यता और श्रम से की गई कमाई में ही उन्हें गुजारा करने का अधिकार है। उनकी सादगी का लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार नहीं था फिर भी, उनकी इस दिशा में प्रगति हुई। कोई भी कदम जो संग्रह के चमकते आकर्षणों की ओर नहीं जाता व्यक्ति को आत्मसाक्षात्कार की ओर आगे ले जाएगा। इस आदर्श को अपनाने से जीवन में चिन्ता, भय, व्यग्रता और तनाव नहीं आएगा।

ज्योही लोगो के पास अधिक हो जाता उन्हे यह भय सताने लगता है कि ये चीज उनसे छिन जाएगी अथवा कोई इन्हे ले न ले। जिनके पास कम है वे अधिक निश्चिन्त होते है, क्योकि उन्हे कुछ खोने का भय नही होता। परन्तु जिसके पास अधिक है वे स्वय को अधिक असुरक्षित अनुभव करते हैं। जो चिन्तन शील, विवेकी और ज्ञानवान है, वे स्वेच्छा से जो चाहे वह रखते हुए भी अपनी सभी समृद्धि और श्री–सम्पत्ति से असंग रह सकते है। सादगी का एक और बडा प्रामाणिक उदाहरण है। १८वीं सदी मे बगाल मे एक महान विद्वान ईश्वरचन्द विद्यासागर हुए थे। विद्वता और सद्‌गुणों के कारण उनकी ख्याति दूर–दूर तक फैल गई। एक समय वे कही से आ रहे थे। गाड़ी देर से रात मे स्टेशन पर पहुॅची। जब वे गाडी से उतर रहे थे तो किसी महिला को सामान उठाने के लिए कुली की पुकारते हुए सुना। रात का समय होने के कारण कुली वहॉ नहीं थे। इसलिए ईश्वर चन्द ने अपनी पगडी खोल कर कुली की तरह बन गए और महिला के पास जाकर कहा–"मै आ गया हूँ"। महिला ने पूछा "सामाना बाहर ले जाने का क्या लोगे?" ईश्वरचन्द्र ने विनम्रता पूर्वक कहा–"आप खुशी से जो कुछ भी दे देगी मै ले लूँगा"। वे गन्तव्य तक सामान लेकर महिला से बिना कुछ लिए विनम्रता पूर्वक प्रणाम कर चले आए।

आन्तरिक पूर्णता सादगी विकसित करती है

जिन्हें सच्चे अर्थों में कोइ उपलब्धि नहीं हुई वे उसकी पूर्ति मिथ्या आडम्बर, अभिमान और अन्य वाह्य साधनों से करना चाहते हैं। परन्तु सच्चे अर्थों में जिन्हें आन्तरिक पूर्णता प्राप्त है उन्हे अन्य किसी चीज की कोई आवश्यकता नहीं होती। इसलिए वे किसी वाह्य साधन से अपने खोखलापन को दूर करने का प्रयास नही करते। जिन्हें आन्तरिक उपलब्धि नहीं हुई हैं वे उसकी क्षतिपूर्ति के लिए वाह्य साधनों पर निर्भर रहते हैं। एस लोगो के कान हर समय सतर्क रहते हैं–"क्या मेरी

आलोचना हो रही है? क्या मै अपमानित हो रहा हूँ? मुझे इन लोगो को बता देना चाहिए कि मै कौन हूँ?" इसलिए जिनके अन्दर खोखलापन है उन्हें सम्मानित होने तथा महत्ता प्राप्त करने की सतत् आवश्यकता रहती है। इसी कारण व्यक्ति जटिल जीवन व्यतीत करने की ओर प्रवृत्त होता है।

कोई बालक कुछ मिठाई चुराकर थोडीसी अपनी जेब में और थोडी सी अपने मुँह में रख लेता है। वह यह सोचकर चुपके–चुपके भाग जाता है कि मुझे कोई देख नही रहा है यद्यपि उसकी इस करतूत को सभी देखते हैं तथा बालसुलभ मूर्खता से आनिन्दित होते है। इसी प्रकार लोग यह सोचते है, कि दिखावटीपन और आडम्बर से वे दूसरो को मूर्ख बना सकते हैं। ऐसी करनी से वे लोग मूर्ख बनते है, जो उसी स्वभाव के होते हैं। परन्तु प्रकृति को कोई धोखा नहीं दे सकता। क्योकि, इसका संचालन ईश्वरीय प्रज्ञा से होता है। इसमे मिथ्याचार और धोखा का कोई स्थान नहीं है। व्यक्ति जैसा नहीं है वैसा बनने का पाखण्ड करने से उसे कुछ प्राप्त नहीं होता। जिन लोगो को ईश्वरीय योजना में विश्वास है उन्हें सृष्टि में सर्वत्र सामंजस्य दिखाई पडता है। उन्हें अपने वैयक्तिक अस्तित्व को ज्ञापित करने की कोई आवश्यकता नहीं होती। परिणामतः वे सादा जीवन स्वतः अपना लेते हैं। इस प्रकार सादगी, समन्वित तथा संतुलित व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है। यह निष्कपटता, बालसुलभ निश्चलता, आडम्बर हीनता, सहजता और परमेश्वर में दृढ़ विश्वास जैसे सद्गुणों का सम्मिलित रूप है। जो व्यक्ति सादा जीवन व्यतीत करता है उसके जीवन में परमेश्वर प्रमुख वास्तविकता बन जाते हैं। उसे यह सत्य अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है कि संसार में सब कुछ सहज और सादगी से परिपूर्ण है। मिथ्याभिमान और पाखण्ड हास्यास्पद स्थिति है।

वास्तविक सादगी का सम्मान

सादगी सुगन्ध के समान है। कुछ पुष्प विशेष प्रकार की सुगन्ध उत्पन्न करते हैं। परन्तु कुछ व्यक्ति उसके अत्यन्त समीप होने

पर भी उस सुगन्ध का अनुभव नही कर पाते। परन्तु जब वे उन पुष्पों से दूर हो जाते है, तो उनकी भिनी–भिनी सुगन्ध उन्हे आने लगती है। ठीक इसी प्रकार सादगी से कभी–कभी व्यक्ति ठगा जाता है। सत और महात्मा अपनी वाह्य अभिव्यक्ति मे इतने सादा और सहज होते है, कि जटिल मानसिकता वाले व्यक्ति उनके ज्ञान और आत्मोन्नति के विषय मे ठीक–ठीक अनुमान नहीं लगा सकते। एक ऐसे प्रोफेसर की कल्पना करे, जिसकी लम्बी–लम्बी दाढी, भारी–भरकम शरीर के साथ–साथ लम्बी–चौड़ी डिग्री है। उसके तामझाम भी अलग है। वह बडे नपेतुले शब्दो मे सादगी पर व्याख्यान देता है। उसके एक–एक शब्द बहुमूल्य प्रतीत होते है। उसके प्रत्येक वाक्य विशेष प्रकार के शब्द और अनुप्रास से अलंकृत है। उस व्याख्या को सुनने के लिए बड़े–बडे विद्वान और पडित आये है। सादगी पर उनका व्याख्यान सफलता पूर्वक सम्पन्न होता है। परन्तु वास्तव मे जिन्हे सादगी जैसे उन्नत मूल्यो को प्राप्त करना है, उन्हे ऐसे लोगो से शिक्षा लेनी चाहिए जो सच्चे अर्थो मे सादगी का जीवन व्यतीत करते हैं। ऐसे लोगो के पास देने के लिए अनमोल रत्न है, परन्तु जो वास्तव मे सादगी का जीवन नहीं जीते वे श्रोताओ को कुछ भी नही दे सकते। क्योकि उनका व्याख्यान अनेक प्रकार के भ्रम और आडम्बरो से भरा होता है।

इसके अतिरिक्त जो सादा जीवन व्यतीत करते है, वे मितव्ययी हो जाते है। वे वाणी मे भी मितव्ययिता का व्यवहार करते है, तथा उनका आचरण निष्कपट और सहज होता है। चूंकि उनमे आजीवन स्पष्टवादिता तथा निष्कपटता जैसे स्वाभाविक गुण बने रहते है, इसलिए वे कुछ भी अप्रासंगिक, आवाछित अथवा लागलपेट की बातें नही कहते हैं। यदि व्यक्ति वास्तव में सादा जीवन से प्रेम करता है, तो इसकी अभिव्यक्ति उसके परिधान, आचरण और किए गए कार्यो में स्वत· होती है। ऐसा व्यक्ति किसी चीज को अनावश्यक रूप से जटिल नहीं बनाता है। यदि सादगी का जीवन अपनाया जाए तो कम समय में अधिक कार्य किया जा सकता है। जब व्यक्ति कार्य करने का सही कौशल और कला

विकसित कर लेता है, तो लोग उसे किसी काम में लगा तो देखते नहीं, अत आलसी मान लेते है। परन्तु सादगी के कारण किसी भी कार्य को करने की उसमें अद्‌भुद क्षमता होती है जिसके कारण वह अल्पावधि मे ही बहुत कुछ कर लेता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है—सादगी को वाह्य जीवन में ही खोजना गलत होगा। फटे—चिटे परिधान पहन कर जैसे—तैसे अव्यस्थित ढंग से रहना किसी भी दृष्टि से सादा जीवन नहीं कहा जा सकता। साधारण वस्त्र पहनना बहुत अच्छा है। परन्तु जो भी साधारण कपडे है, उन्हे साफ रखना चाहिए। स्वास्थ्य के नियमों का अनुपालन करना आवश्यक है। अस्त—व्यस्त जीवन को सादा जीवन समझने की भूल नहीं करनी चाहिए।

उच्च विचार की अन्तिम परिणति है। अहंकारिक जटिलता रहित एक सहज मन का विकास करना। तभी वह सृष्टि में जो शुभ और सुन्दर है उसको परिपोषित और संचित करने वाला सतत स्त्रोत बन सकता है। भगवान बुद्ध, जेसस क्राइस्ट और सुकरात जैसा मन विकसित कीजिए। ऐसे मन का स्वामी बनिए जो सभी अहकारिक जटिलताओ से सर्वथा मुक्त हो, जो अन्तः प्राज्ञिक हो और जो शाश्वतता के आकाश में विवेक और वैराग्य के पंख फैलाए उन्मुक्त हंस की तरह बिहार कर सके। सादा जीवन व्यतीत करते हुए ऐसा मन विकसित करना ही सभी सन्त महात्माओं का लक्ष्य रहा है। इस आदर्श का सम्मान करना चाहिए तथा उसे प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहना चाहिए।





५

अनुकूलनशीलता कैसे विकसित करें

यह जगत सापेक्षिक है। जीवन की प्रत्येक स्थिति की एक सीमा है। चाहे कितनी भी अच्छी स्थिति क्यो न हो, उसमें भी कुछ न कुछ कमी अवश्य रहेगी। उसमे ऐसा जरूर होगा जिसके प्रति धैर्य और सहनशीलता विकसित करने की आवश्यकता होगी।

चाहे आप कहीं क्यों न चले जाये, सर्वत्र यह संसार उसी पचतत्वों से बना मिलेगा। जगत मे भले ही अनेक विविधताये हैं, फिर भी वे सभी मिलकर भी जीवात्मा की माग पूरी नहीं कर सकती, जीवात्मा शान्ति, आनन्द और आत्मज्ञान की भूखी है जिसे ससार से नहीं प्राप्त किया जा सकता। इसलिए जीवन की विभिन्न परिस्थितियो के साथ सामंजस्य और अनुकूलनशीलता विकसित करने की आवश्यकता की उपेक्षा नही की जा सकती। साधक में तितीक्षा का गुण होना अत्यन्त आवश्यक है। "अनुकूलनशीलता" के अभ्यास से तितिक्षा की कठोरता कम होती है और एक आश्चर्य जनक मधुर आनन्द का अनुभव होता है।

अनुकूलनशीलता के विभिन्न पहलू

आपको शरीर का बढती अवस्था के साथ अनुकूलनशीलता विकसित करनी चाहिए। आप को संसार और समाज की परिवर्तित हो रही परिस्थितियो के साथ सामजस्य स्थापित करते हुए उनके अनुकूल बनना चाहिए। मन के परिवर्तित हो रहे मूल्यों के अनुकूल बनने की आवश्यकता है। विकास की कुंजी परिवर्तित हो रही परिस्थितियों के साथ अनुकूलनशीलता बनाने मे छुपी है। यहाँ तक कि प्रकृति के वाह्य परिवेश में होने वाले परिवर्तनों के साथ प्राणियो में भी तद्नुरूप परिवर्तन हुआ करते हैं। इस प्रकार उनका विकास क्रम चलता रहता है। आध्यात्मिक मार्ग पर उन्नत्ति चाहने वालो को तो और अधिक अनुकूलनशीलता विकसित करने की आवश्यकता होती है।

यह ससार नश्वर है। रेल अथवा जहाज मे बैठे यात्री के समान हम अपने सम्बन्धियों के साथ कुछ समय के लिए मिलते है। इसलिए इस तथ्य को अच्छी तरह समझते हुए कि एक न एक दिन ये सभी परिस्थितियां समाप्त हो जायेगी, व्यक्ति को जीवन के परिवर्तित हो रहे परिदृश्य के साथ सामंजस्य बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। साधक के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह विभिन्न रूचि, आदत और स्वभाव को लोगों के साथ तालमेल बैठाकर सहजता पूर्वक उनके साथ रह सके। जीवन में विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ व्यवहार करना पडता है। अतः इस गुण की अत्यन्त आवश्यकता है।

राजयोग मे विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ कैसे व्यवहार करना चाहिए इस दिशा में बहुत सुन्दर मार्ग दर्शन दिया गया है। आप से ज्ञान, बुद्धि, समृद्धि, सफलता और यश में जो श्रेष्ठ है, उनके साथ मुदिता का व्यवहार करना चाहिए। ऐसे महामानवों को देखकर आप यह अनुभव करें कि आपकी ही आत्मा की यह श्रेष्ठ अभिव्यक्ति है। आप स्वय उन्नत होकर इस अवस्था को प्राप्त कर सकते है। उनके व्यक्तित्व के माध्यम

से अपनी आत्मा को ही अभिव्यक्त होते देखकर आनन्द का अनुभव कीजिए। इस प्रकार उनकी सफलता से आप अपनी आन्तरिक आत्मिक सत्ता के भावी विकास की अभिपुष्टि करते हैं।

जो व्यक्ति विकास और उपलब्धि की दृष्टि से आपके समान है, उनके साथ मित्रता का व्यवहार करें। आपको चाहिए कि आप दूसरों के मार्ग में आई बाधाओ को समाप्त करने मे सहयोग करें। इससे अन्य लोंगो की संयुक्त शक्ति से आपके मार्ग की बाधायें भी दूर हो जाएगी। अपने समान लोगों को देखकर मन में द्वेष, ईर्ष्या अथवा घृणा की भावना नहीं उत्पन्न होने दें। आध्यात्मिक साधना में व्यापारिक स्पर्धा का कहीं स्थान नहीं है। इसके विपरीत, इसमें हृदय की उदारता और विशालता का विकास किया जाता है।

विकास और उपलब्धियों की दृष्टि से जो आप से नीचे हैं उनके प्रति करुणा भाव उत्पन्न कीजिए। आपको ऐसे लोगों के प्रति क्रूर और कठोर नहीं होना चाहिए। इसके विपरीत उन्हें देखकर यह धारणा करनी चाहिए कि आप भी किसी समय उस स्थिति में थे। आप भी अपनी दुर्बलताओं, कमजोरियों और विषम परिस्थितियों से कभी संघर्ष कर रहे थे। ऐसे लोगों मे अपनी ही विगत कालीन आत्मा की झलक देखनी चाहिए। स्वयं मे महान भावना लाए बिना जो विकास के निम्न सोपानो पर संघर्ष कर रहे हैं, उनके प्रति सद्भावना तथा करुणा का भाव उत्पन्न करना चाहिए।

जो अत्यन्त विकृत, विरोधी और अपराधी वृत्ति के हैं उनके प्रति उपेक्षा अथवा उदासीन भाव रखना चाहिए। उनके किसी आचरण अथवा बातो की प्रतिक्रिया मे कुछ कहने अथवा करने से उनकी ऋणात्मक क्रियायें और बढती हैं। इसके विपरीत यदि आप उनके किसी भी व्यावहार से आहत हुए बिना यह सोचकर उपेक्षा कर देते हैं, कि ये आध्यात्मिक रूप से बीमार हैं, इसलिये इन्हें यह ज्ञात नहीं है कि ये क्या कर रहे है" तो आपको शान्ति मिलेगी।

अनुकूलनशीलता से दूसरों का दिव्य स्वरूप प्रकट होता है

विभिन्न स्वभाव और प्रकृति के लोगों के साथ अनुकूलनशीलता विकसित कर योगी उनमें विद्यमान सर्व श्रेष्ठ गुणो को प्रकट होने के लिए सुअवसर प्रदान करता है। इस कला मे सभी योगी बडे निपुण होते है। लोगो के साथ सही तालमेल और अनुकूलनशीलता बनाकर आप अपने उच्चविचार तथा आदर्शो को उन तक पहुँचा सकते हैं। इसके विपरीत यदि आप अपनी ही जगह अडे रहेगे, तो आपने चारो और विषम परिस्थितियो ओर कठोरता का सागर लहराते पायेगे। इस कारण आपका व्यक्तित्व छिन्न भिन्न हो जाएगा। आप कठोरता की अँधेरी खाई मे डूब जायेगे।

इस सन्दर्भ मे अकबर और बीरबल की एक हास्य कथा है। अकबर के मुँह से बैगन की बड़ाई सुनकर बीरबल ने कहा–"हॉ महाराज बैगन तो शाही सब्जी है। इसीलिए परमात्मा ने इसके सर पर सुन्दर मुकुट बना दिया है। परन्तु थोडी ही देर के बाद अकबर के यह कहने पर कि बैंगन को पचाना बडा कठिन है बीरबल ने कहा–"आप ठीक कहते है स्वामी, इससे गई गुजरी और कोई सब्जी है ही नहीं। इसलिए परमेश्वर ने इसके ऊपर एक कांटा बना दिया है।" अकबर को बड़ा आश्चर्य हुआ–"क्या अभी–अभी तुम बैंगन की प्रशंसा नहीं कर रहे थे? अब क्या हुआ कि ठीक उल्टी बात करने लगे हो? बीरबल ने कहा–"क्योंकि महाराज मैं आपका सेवक हूँ। इस बैंगन का नहीं।" इस कथा में वाणी की अनुकूलनशीलता का अच्छा उदाहरण दिया गया है।

आप लोगो की परिसीमाओं और मानसिक विकृतियों के दास नही है। इसलिए विभिन्न स्वभाव वाले लोगों के अनुकूल बन कर आप उनकी आत्मा की अधिक सेवा कर सकते हैं। आप उस ईश्वर के दास हैं, जो सभी प्राणियों में स्थित है। परन्तु दूसरों के साथ तालमेल बैठाकर जीने

अथवा विभिन्न लोगों की भिन्न–भिन्न प्रकृति के अनुकूल बनने की क्रिया को बुरे लोगो की बुरी आदतो के प्रति आत्मसमर्पण समझ लेने की भूल न करें। व्यक्ति में विद्यमान शैतान के समक्ष घुटने टेकना उसकी शैतानिक वृत्तियों को प्रश्रय देना है। अनुकूलनशीलता के विषय में भ्रामक धारणा के कारण कुसगति में न पड़े। अपनी परिस्थितियों और जीवन की घटनाओं के विरोध में शिकायत न करें। जहाँ तक संभव हो परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होने का प्रयास करे। उनके साथ तालमेल बनाएँ। यदि आप को खूंखार भेडियों के बीच भी डाल दिया जाय तो आप अपनी समझदारी और अनुकूलनशीलता की कला से उन्हें पालतू मेमनों" के रूप मे बदल देंगे।

ब्रह्माण्डीय एकता के सत्य के साथ अनुकूल बनिये

आपके मेरुदण्ड की लचिलता आपको ब्रह्माण्डीय प्राण के साथ संयुक्त करने में सहायक है। आपके अहंकार में विकसित विनम्रता आपको ब्रह्माण्डीय मन के साथ संयुक्त करती है। ईश्वर के प्रति समर्पण भाव विकसित करके आप ब्रह्माण्डीय समता के साथ स्पन्दित होने लगते हैं। आपने ब्रह्माण्डीय एकता के सत्य के साथ अनुकूलनशीलता विकसित करने के लिए ही जन्म लिया हैं।

भगवद्गीता मे स्थिति प्रज्ञ के जो लक्षण बताए गए हैं यदि आप उसका अभ्यास कर रहे हैं तो आप ब्रह्माण्डीय जीवन के सत्य के साथ एकात्मता बन रहे हैं। इसके लिए आप को ब्रह्माण्डीय प्रेम, अहिंसा, ईश्वर समर्पण।, ईश्वरीय सत्ता में पूर्ण श्रद्धा और मानवता की सेवा के माध्यम से अपने सीमित स्वरूप की आहुति देने जैसे सद्‌गुणों को विकसित करना होगा।



६

सकारात्म·ः स च कैर करे?

विचार से अधिक प्रभावकारी अन्य कोई शक्ति नहीं है। विचारशक्ति से व्यक्तित्व को एक सुनिश्चित स्वरूप प्रदान किया जाता है तथा व्यक्ति अपने भाग्य को परिवर्तित कर सकता है।

सभी कर्मो का मूल विचार है। सभी परिस्थितियो का निर्माण विचार के द्वारा ही हुआ करता है। सभी उपलब्धियों और सफलताओं की कुंजी विचार में छुपी है।

"**आ**प जैसा सोचते हैं, वैसा बन जाते हैं" यह कहावत गहनज्ञान पर आधारित है।

एक दूसरी कहावत भी बहुत महत्वपूर्ण है—"विचार के बीज बो कर आप कर्म की फसल काटते है। कर्मो के बीज बोकर आप आदत की फसल काटते हैं। आदत का बीजारोपण करके आप एक जीवन क्रम की फसल काटते हैं। जीवनक्रम के बीज बोकर आप चरित्र की फसल काटते हैं और चरित्र के बीज बो कर आप भाग्य की फसल काटते हैं।"

वेदान्त दर्शन के अनुसार यह संसार ब्रह्माण्डीय मन (हिरण्यगर्भ) का ही अभिव्यक्त रूप है। माया पर अवलम्बित विचार और धारणाओं के रूप में इसका अस्तित्व है। इसकी कोई ठोस वास्तविकता नही है।

अन्त·प्राज्ञिक ज्ञान से जब इस स्थूल जगत् को देखते है, तो यह अस्तित्वहीन हो जाता है। यह तो मानसिक तत्वों से निर्मित है। इस

प्रकार व्यक्ति का मन ब्रह्माण्डीय स्रोत से असीम शक्ति प्राप्त कर इस भौतिक जगत् मे आश्चर्यजनक परिवर्तन कर सकता है। वैयक्तिक मन ब्रह्माण्डीय मन के सागर में एक लहर के समान है। अत व्यक्ति के लिए यह सभव है कि वह अविद्या और अहकार के कारण जो परिसीमा बनाई गई हैं, उनसे ऊपर उठकर ब्रह्माण्डीय मन के साथ एकत्व बना सके। योग साधना का उदेश्य भी यही है।

मन जब अहंकारिक आसक्ति और कामनाओं से रहित होता है तो ब्रह्माण्डीय मन के साथ एकात्मता स्थापित कर लेता है। रचनात्मक चिन्तन के मार्ग पर यह आगे बढते हुए एकमात्र वास्तविकता 'ब्रह्म्' को प्राप्त कर लेता है।

विचारों का उद्गम स्रोत

जिस प्रकार सरोवर मे लहरे उत्पन्न होती हैं, वैसे ही मन मे निरन्तर विचार उत्पन्न होते हैं। इसके आधार पर ही व्यक्ति को सुख–दुख के विभिन्न अनुभव हुआ करते हैं।

मानसिक विचारों का केन्द्र अहं प्रेरित विचार है। व्यक्ति मे सबसे गहरी इच्छा अपने सच्चिदानन्द स्वरूप की अनुभूति करना है। अविद्या के कारण मन अपने केन्द्र की ओर जाने के बदले इन्द्रियॉ और बहिर्मुखी वृत्तियो के द्वारा नाम–रूप से निर्मित इस संसार में भटकने लगता है।

साधक जब अपने मन को अन्तर्मुखी बनाने की कला में प्रवीणता प्राप्त कर लेता है तो उसे अहंकारिक विचारों का रहस्यमय केन्द्र ज्ञात हो जाता है। वास्तव में व्यक्ति के हृदय में परमात्मा की उपस्थिंति की यह अभिव्यक्ति है। मन की बहिर्मुखी वृत्ति के कारण यह मनोताप पर बने भ्रामक अहकेन्द्र के साथ एकात्मता बना लेता है। जब विभिन्न प्रकार की कामनाओं से मन मुक्त हो जाता है तो यह अपने केन्द्र–आत्मा की ओर आकृष्ट होता है और जिस प्रकार अनन्त आकाश मे बादल का एक

टुकडा समाहित हो जाता है वैसे ही भ्रामक वैयक्तिक केन्द्र (जीवात्मा) आत्मा के साथ मिलकर एक हो जाता है।

जिन विचारों से आत्मानुभूति और ईश्वरीय साक्षात्कार होता है, वे सर्वश्रेष्ठ प्रकार के सकारात्मक विचार है। जिन विचारो से आत्मानुसधान में व्यवधान पडता हो वे नकारात्मक विचार है। दुःख, चिन्ता और जन्म–मृत्यु के लिए ऐसे विचार ही उत्तरदाई है।

सकारात्मक विचार

जिन विचारो से भक्ति और ज्ञान विकसित होता है वे उत्कृष्ट कोटि के रचनात्मक विचार है। ऐसे विचार समुन्नत्त व्यक्तित्व और परिशुद्ध मन से उत्पन्न होते है।

परिशुद्ध विचार को सतसंकल्प और सतकाम कहा जाता है। ये योगियो, सतो और साधुओ के मन की गहराई में स्थित रहते है।

सतसकल्प भगवान श्री राम के लक्ष्यभेदी वाणों के समान है जो अपने उद्देश्य मे अवश्य सफल होते है। इनको ईश्वरेच्छा की शक्ति प्राप्त होती है।

भगवान राम के स्वरूप का एक गुह्य एवं रहस्यात्मक अर्थ है। उनका लक्ष्य भेदी वाणों से भरा अक्षय तरकश परिशुद्ध चित्त का परिचायक है जिसमें द्वैत भावना रूपी दैत्यों के विनाश करने वाले सतसंकल्पो के वाण भरे हैं।

सद्भावना, करुणा, सहानुभूति, आध्यात्मिक प्रेम, समता तथा सामजस्य विकसित करने वाले विचार सकारात्मक धनात्मक हैं। इनसे मानव व्यक्तित्व उत्कृष्ट और दिव्य बनता है.।

विवेक से निर्देशित वे सभी वृत्तिया जो यम और नियम, अहिसा, सत्य, शुचिता इत्यादि पर आधारित है, सकारात्मक विचार है। व्यक्ति को उसके आन्तरिक आध्यात्मिक स्रोत की ओर ले जाने वाले मे सहयोगी है।

सकारात्मक विचार पूर्ण प्रस्फुटित पुष्प के परिमल के समान हैं। इनसे मन स्वत तनाव रहित, शान्त, निर्भय और आनन्दित हो जाता है। धनात्मक विचार आत्मा का स्वाभाविक गुण हैं। ये वाह्य परिस्थितियों के आधार पर विकसित नही होते। न तो ये बनावटी हैं और नही और किसी वाह्य घटना अथवा परिस्थितियों पर निर्भर करते। इसके विपरीत ये स्वतः और स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हुआ करते हैं।

बादलो के छटने पर ही नीलाम्बर अपनी पूर्ण भव्यता में उद्भाषित होता है। उसी प्रकार रचनात्मक चिन्तन के द्वारा जब मानसिक द्वंद्व और नकारात्मक विचारो के बादल विनष्ट हो जाते हैं, तो विभिन्न प्रकार के सद्गुणो के रूप मे आत्मा की भव्य महिमा अभिव्यक्त होती है।

साधक को चाहिए कि वह सबों के लिए सद्भावना प्रेषित करे। इस सृष्टि मे किसी के प्रति उसके मन मे बैर भाव अथवा अशुभ विचार न हो।

सकारात्मक विचारों की शक्ति

जीवात्मा के लिए रचनात्मक विचार सर्वश्रेष्ठ साधन है। इनसे व्यक्ति में जो भी सर्वश्रेष्ठ गुण हैं वे सहजता से अभिव्यक्त होते हैं।

सकारात्मक सोच की शक्ति से व्यक्ति अपने जीवन को पूर्णतः रूपान्तरित कर सकता है। ससार मे ऐसा कुछ नहीं है जिसे सकारात्मक सोच से प्राप्त न किया जा सके।

जब आप धनात्मक चिन्तन करने लगते हैं तो आपके पूर्वकृत शुभकर्म आपके अनुकूल स्पन्दित होने लगते है। वे अधिक से अधिक प्रवेग प्राप्त कर आपके प्रारब्ध कर्म बन जाते है। इसके विपरीत यदि आप नकरात्मक चिन्तन करते है, तो आपके पूर्वकृत ऋणात्मक संस्कार अधिक प्रबल हो जाते है, जो ऐसे ही प्रारब्ध का निर्माण करते हैं। परिणामत. आपको अपने दैनिक जीवन मे वही आप की वास्तविकता

बन जाती है तथा आपको वैसी ही विषम परिस्थितियो का सामना करना पडता है।

मृत्यु काल मे आपका अन्तिम विचार जैसा होता है, उसी से आपके भावी जन्म का निर्धारण होता है। इसलिए यदि मरते समय मन धनात्मक चिन्तन कर रहा होगा तो व्यक्ति मुक्ति प्राप्त कर लेता है। उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

परन्तु यह अन्तिम विचार यू ही नहीं उत्पन्न होता। अपने दैनिक जीवन में योगी हर पल रचनात्मक चिन्तन करता रहता है जिसके कारण मृत्यु के अन्तिम क्षणो में भी उसके मन मे ऐसे ही विचार उठते रहते हैं।

संसार में ऐसे महान् व्यक्ति हुए है, जिनका जन्म अत्यन्त निर्धन और साधनहीन परिवार में हुआ था। परन्तु सकारात्मक सोच की शक्ति से इन लोगों ने आश्चर्य जनक सफलता प्राप्त किया।

अपने जीवन के आरंभिक वर्षो में महर्षि बाल्मीकि एक खुंखार लुटेरा थे। परन्तु सत्संग के प्रभाव मे आकर वे पूरी तरह रूपान्तरित हो गए। आदिशंकराचार्य का जन्म एक अत्यन्त गरीब परिवार में हुआ था। परन्तु रचनात्मक चिन्तन के परिणाम स्वरूप वे योग–वेदान्त के महान् ज्ञाता और प्रेरणा स्रोत बने।

सभी कर्मों का आधार विचार है। इसलिए जब आप का मन सकारात्मक सोच से परिपूर्ण हो जाता है, तो आप के कार्य उत्कृष्ट और अत्यधिक प्रभावी हो जाते हैं। रचनात्मक चिन्तन करने वाला व्यक्ति महान कार्यो का प्रणेता बन जाता है। उसके कार्य से संसार मे समता, सामजस्य और सद्भावना स्थापित होती है। अपने सद्कर्मो के कारण वह शताब्दियो तक याद किया जाता है।

सकारात्मक विचार पर सत्य की मुहर लगी होती है। इसलिए यह निश्चित रूप से प्रभावी होती है। इसके विपरीत ऋणात्मक विचार असत्य और अज्ञान पर आधारित होता हे। इसलिए समय की कसौटी पर खरा नहीं उतरता। रचनात्मक चिन्तन से आप रोग दूर कर सकते,



विचार का बीजारोपण करके आप सफलता की फसल काट सकते हैं

- स्वमी ज्योतिर्मयानन्द

अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण कर सकते, मित्र बना सकते, वातावरण से द्वेष और घृणा को दूर कर सकते, सुख,समृद्धि, सफलता प्राप्त कर सकते तथा मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य–आत्मसाक्षात्कार कर सकते हैं।

अशुभ विचारों के विध्वंसात्मक प्रभाव

भौतिक शरीर, प्राण और विचारो मे बहुत गहरा सम्बन्ध है। राग–द्वेष, भय, चिन्ता, निराशा जैसे अन्य अशुभ विचार व्यक्तित्व में प्राणों के सन्तुलन को समाप्त कर देते हैं। इसके परिणाम स्वरूप शरीर का रासायनिक सन्तुलन बिगड जाता है जिसके कारण अनेक प्रकार की बीमारियाँ होने लगती है।

शुभ और सात्विक विचारों एवं आध्यात्मिक चिन्तन से जहॉ शरीर में नई ताजगी, चेहरे पर चमक और व्यक्तित्व में एक अद्‌भुत आभा आती है, वहीं ऋणात्मक विचारों के कारण शरीर शिथिल, चेहरा पीला, आंखें धॅसी हुई तथा व्यक्तित्व आभाहीन बन जाता है। व्यक्ति कुरूपता और विनाश का प्रतिबिम्ब हो जाता है। हिसा, द्वेष, क्रूरता, घृणा, दुर्भावना, अहंकार–आडम्बर अनियंत्रित वासना और लोभ जैसे अशुभ भावों के कारण व्यक्ति के निजी जीवन तथा उसके आसपास के परिवेश में अनेक प्रकार की विघटनात्मक स्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं।

हिंसा का प्रत्येक विचार जो मूलतः किसी दूसरे व्यक्ति की ओर निर्देशित किया जाता है, वह पूरे प्रवेग से पुनः अपने उद्‌गम स्रोत पर ही वार करता है। इसके कारण इन विचारों को प्रेषित करने वाले व्यक्ति को ही आघात लगता है।

यदि कोई व्यक्ति सकारात्मक सोच की कला नहीं विकसित कर पाता है, तो वह अपने अन्दर विद्यमान भव्य सभावनाओं की झलक प्राप्त करने में असमर्थ हो जाता है। वह सासारिकता के दलदल में डूबता जाता है।

ऋणात्मक चिन्तन से व्यक्ति स्वय को अनेक प्रकार की बुराइयो का शिकार बना लेता है। उसकी बुद्धि मन्द हो जाती, आत्मा पर अनेक प्रकार के तामसिक सस्कारो का आवरण चढ़ जाता तथा शरीर में विषैले पदार्थों की वृद्धि हो जाती है।

क्लेश के आधार पर उत्पन्न होने वाले विचार ऋणात्मक होते हैं। योगी अनेक प्रकार की साधनाओं के द्वारा अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश–इन पंचक्लेशों को समाप्त कर देता है।

मानव जीवन में जो भी अशुभ, विकृत, भयानक, विध्वसात्मक और अमंगलकारी है उन सबो को कारण अशुभ चिन्तन है। उन्हें सकारात्मक सोच और शुभ विचारो के द्वारा समाप्त करना चाहिए।

सकारात्मक चिन्तन के लिए निर्देश

अच्छी संगति–सत्संग से आपका अचेतन मन आध्यात्मिक स्पन्दनों से परिपूर्ण हो जाता है। सकारात्मक सोच मे सत्संग अत्यधिक सहायक है।

ससार के महान् सत और योगियों द्वारा रचित प्रेरक ग्रन्थो का अध्ययन कीजिए। आपका मन आध्यात्मिक आदर्शो की भव्य ऊचाई तक उड़ान भरने लगेगा। .

परमात्मा का ध्यान कीजिए। अपनी रूचि और क्षमता के अनुसार आप विभिन्न चीजो का ध्यान कर सकते हैं। ध्यानाभ्यास से आप का अचेतन मन सात्विक और समता के सस्कारों से परिपूर्ण बनता है। अपने विचारों को नियंत्रित कीजिए। उन्हें व्यवस्थित कर एक धनात्मक दिशा प्रदान कीजिए।

हर समय इन्द्रिय सुखों अथवा विषय भोग मे नही लगे रहिए। इसके विपरीत अपने दैनिक जीवन में कुछ समय ऐसा सुनिश्चित करे जिसमें आध्यात्मिक विषयों पर नियमित रूप से कुछ न कुछ लिखें। यदि

आपकी रूचि हो तो आध्यात्मिक आदर्शो के भावों से युक्त कविता करे। अपने मन की शक्तियों को सही दिशा देने के लिए कोई कला सीखे अथवा सृजनात्मक क्रियाओ में स्वयं को लगायें।

अपने मन को खाली और निठल्लू नहीं रखे। ऐसे मन मे ही शैतान का वास हो जाता है।

सत्य का आचरण करे तथा अपनी चेतना को स्पष्ट और खुली रखें। आपके मन मे शक्तिशाली और प्रखर धनात्मक विचार उत्पन्न होंगे।

ईश्वर भक्ति विकसित करे। सभी प्रकार के रचनात्मक विचारों की यही कुंजी है।

आध्यात्मिक चिन्तन और मनन से "मै" के मूल स्रोत को उद्घाटित करने का प्रयास करें। सभी प्रकार के सकरात्मक सोच का यही लक्ष्य है।

ब्रह्मकार वृत्ति ही सर्वोच्च प्रकार का धनात्मक चिन्तन है। इससे आत्मसाक्षात्कार प्राप्त होता है।

जप, प्रार्थना और किसी आश्रम में नि:स्वार्थ सेवा के द्वारा विचारो के लिए सात्विक पृष्ठ भूमि निर्मित करें।

जीवन मे सद्कर्म करें। इससे अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण होता है जो परोक्ष रूप से आपके विचारों को उन्नत बनाने मे सहायक है।

समता पूर्वक एवं सन्तुलित जीवन व्यतीत कीजिए। अपने दैनिक जीवन मे सम्पूर्ण योग का अभ्यास करे।

जब मन मे कोई ऋणात्मक विचार उत्पन्न हो, तो आपको उनके साथ संघर्ष करने की आवश्यकता नहीं है। उससे तनाव उत्पन्न होगा और आपका सकल्प दुर्बल होगा। चेतन मन के आकाश मे बुरे विचारो के उडते काले बादलों को द्रष्टा भाव से देखते रहे।

जब इन पर आप ध्यान नहीं देगे तो ये स्वत: समाप्त हो जायेगे।

प्रतिपक्ष भावना–अर्थात् किसी बुरे विचार के उत्पन्न होते ही मन

मे उसके ठीक विपरीत शुभ विचार लाने का प्रयास की कला सीखिए। इसकी तीन अवस्थायें हैं। जब मन में कोई भी अशुभ विचार जैसे द्वेष उत्पन्न हो, तो सर्वप्रथम इससे स्वयं को अलग रखने का प्रयास करे। इसके पश्चात् अपने मन को प्रेम, सद्भावना तथा समझदारी के सात्विक विचार तरंगों से परिपूर्ण करें। उदारता जैसे सद्गुण से उत्पन्न आनन्द के विषय में सोचे। अपने मन के समक्ष ऐसे महापुरुषो के चित्र प्रस्तुत करें जो प्रेम, सद्भावना, सहानुभूति और उदारता के आदर्श रहे हैं। अन्त में जब आप के मन में धनात्मक विचारों की ज्योति प्रस्फुटित हो जायेगी तो उठा हुआ अशुभ विचार स्वतः समाप्त होने लगेगा। ऋणात्मक विचारो मे जो शक्ति लगी थी उसका रूपान्तरण आध्यात्मिक अनुभूति प्राप्त करने मे हो जाएगी।

अपने मन को जप, प्रार्थना, ध्यान सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय और मानवता को निःस्वार्थ सेवा के द्वारा प्रशिक्षित करने के प्रयास कीजिए। योगसाधना द्वारा उत्पन्न शुभ संस्कारों को मन में विद्यमान अशुभ संस्कारों से प्रतिस्थापित करें।

स्वयं को सकारात्मक परामर्श देने की कला विकसित करें। मन में दुर्बल विचारों के बदले धनात्मक और शुभ विचार प्रेषित करें।

"अपने भाग्य का निर्माता मैं स्वयं हूँ।"
"मेरे अन्दर अनन्त आत्मिक शक्ति का सागर विद्यमान है।"
"प्रतिदिन मेरा संकल्प बढ़ता जा रहा है।"
"मै सुख, शान्ति और पूर्णता का अनुभव कर रहा हूँ।"
"मैं अपने मन, बुद्धि और इन्द्रियों का स्वामी हूँ।"
"मैं परमानन्द स्वरूप परमात्मा में ही स्थित हूँ।"
"मैं सच्चिदानन्द स्वरूप हूँ।"
"मैं परम स्वतंत्र आत्मन् हूँ।"

विश्व के महान् ग्रन्थों से आप प्रेरक और धनात्मक विचारों का संग्रह करें। जिस प्रकार सुगन्धित पुष्पों के पराग का आनन्द मधुमक्खिया लेती रहती है, वैसे ही अपने मन को इन विचारो का आनन्द लेने दीजिए।

विश्व के महान संत–महात्माओं ने जो प्रेरक विचार और धनात्मक संदेश दिए हैं, उन्ही उत्कृष्ट विचार तथा भावो का रसास्वादन करते रहें।

महत्वपूर्ण प्रार्थना, श्लोक तथा चौपाइयो को याद कर लीजिए। जब आप आराम कर रहे हो, तो मन में इन्हीं प्रार्थना और चौपाइयों को गाते रहे। विश्राम के क्षणों में अपने मन को इधर– उधर नहीं भटकने दीजिए।

सोने से पूर्व मन को धनात्मक और शुभ विचारों से पूर्ण करें। प्रात· काल उठने पर मन में धनात्मक विचार लायें। खाना खाने से पूर्व भी अपने विचारों को उन्नत बनायें। स्नान करते समय प्रार्थना करें। इन क्षणो में आपका अचेतन मन अत्यधिक सुग्राही हुआ करता है।

जैसे–जैसे आप योग मार्ग पर उन्नति करते जायेंगे आप परमात्मा की अन्त·प्राज्ञिक अनुभूति में ही स्थित होने लगेंगे। आपके मन में हर पल दिव्यता के स्पंदनों के कारण केवल शुभ, रचनात्मक और धनात्मक विचार ही उठा करेंगे। प्रखर सूर्य के समक्ष भला अंधेरा कैसे ठहर सकता है सकारात्मक सोच की कला सीख कर आप आध्यात्मिक ज़ीवन के आनदो का अनुभव कर सकेगे। आपको परमात्मा की अनुभूति हो जाएगी जिसके पश्चात आप सभी प्रकार के विचार तरगों से ऊपर उठ जायेगे। आपके जीवन का यही लक्ष्य है। ईश्वरीय आशीर्वाद आपको प्राप्त हो।





७

जीवन में दूरदर्शिता का विकास कैसे

सफलता चाहने वालों के लिए यह आवश्यक है कि जीवन के सभी क्षेत्रो में वे दूरदर्शिता विकसित करें। सुख, समृद्धि, स्वास्थ्य, सम्बन्ध, मित्र तथा जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में दूरदर्शिता विकसित करने की आवश्यकता है।

दूरदर्शी व्यक्ति सहनशील, धैर्यवान और दृढ निश्चयी होता है। परमात्मा में अटूट श्रद्धा और विश्वास असीम्य दूरदर्शिता का मूल है।

अदूरदर्शिता, अधीरता, संशय, दुर्बल संकल्प ये सभी दुर्गुण एक साथ रहते हैं। इसके विपरीत, दूरदर्शिता परिशुद्ध मन का सौरभ है। जहॉ दूरदर्शिता है वहीं दृढ संकल्प होता है।

जीवन में दूर दर्शिता विकसित करने के लिए निम्नाकित बातो को ध्यान में रखना होगा।

अपने तथा दूसरो के प्रति कोई धारणा अथवा निश्चय करने में जल्दबाजी नहीं करे।

"**य**ह भी एक न एक दिन समाप्त हो जाएगा" इस धारणा को मन मे दृढ करते हुए धैर्यपूर्वक अपने लक्ष्य की ओर लगे रहिए।

सन्तुलित और समतापूर्वक जीवन व्यतीत कीजिए। ससार की छोटी–छोटी और तुच्छ बातों मे अपनी मानसिक शक्ति को व्यर्थ नही करें

प्रतिदिन सत्सग, मंत्रजप, सद्ग्रन्थो का स्वाध्याय और ध्यान का अभ्यास करें।

मानवता की सेवा के लिए सतत प्रयत्नशील रहे। जिन गुणों के द्वारा आप मानवता की प्रभावी ढग से सेवा कर सकते है उसके विकास के लिए सदा उत्सुक रहें। मानवता की सेवा के द्वारा आप अपने हृदय को शुद्ध बनाते है। परिशुद्ध हृदय में ही महान रचनात्मक प्रतिभा प्रस्फुटित होती है। जब आपके विचार अहकारिक सकीर्णता के दबाव से मुक्त होंगे तो आप जीवन की विभिन्न परिस्थितियों और गतिविधियों में स्वतः ही दूरदर्शिता विकसित कर लेंगे।

आप अपने खेतों की तैयारी के लिए वर्षा होने की प्रतीक्षा नहीं करेंगे। आप अपनी दूरदर्शिता से यह जान लेंगे कि वर्षा तो निश्चित रूप से आएगी। अभी आपको जो अवसर और संभावनायें प्राप्त हुई है उसका आप सर्वोत्तम सदुपयोग करेंगे। कि "जब सूर्य चमकता है तभी खलिहान समेट लो" की उक्ति को आप ध्यान मे रखेंगे और उसी समय अधिक से अधिक उपलब्धि कर लेने का प्रयास करेगे।

जीवन मे जब सुनियोजित और क्रमवार ढंग से कार्य करने की कला विकसित कर लेंगे तो आप इस संसार और परिस्थितियो के वास्तविक स्वरूप के विषय में यथार्थ अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर लेगे। अन्तर्दृष्टि दूरदर्शिता के वृक्ष का पोषक तत्व है। दूरदर्शिता के इस वृक्ष पर पूर्वानुमान के पुष्प प्रस्फुटित होते हैं जो परमात्मा के अन्तः प्राज्ञिक अनुभूति के फलों को धारण करते हैं।

वैयक्तिक मन ब्रह्माण्डीय मन के साथ संयुक्त है। इसलिए जब मन परिशुद्ध हो जाता है तो व्यक्ति ब्रह्माण्डीय मन से प्रेरणा प्राप्त करने

मे सफल हो जाता है। महान सन्त–महात्माओ को होने वाले भविष्यज्ञान का यही आधार है।

दूरदर्शिता के परिणामस्वरूप आप मे विवेक, वैराग्य तथा मुमुक्षत्व आत्मज्ञान के लिए उत्कट आकाक्षा उत्पन्न होता है। आध्यात्मिक साध ाना के पथ पर आपको रहस्यमय अन्तर्दृष्टि प्राप्त होगी जिसकी सहायता से आप निर्वाण प्राप्त कर लेगे।

अदूरदर्शी नहीं बनिए। यह जीवन बहुत छोटा है। ईश्वर–साक्षात्कार करने का प्रयास कीजिए।

आप जो प्राप्त करना चाहते है उसके विषय में दूरदर्शी बनिए। आत्मिक सत्ता सभी भौतिक स्थितियों और बाधाओं पर विजय प्राप्त कर सकती है। आपकी नियति आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करना है। इसलिए आत्मसाक्षात्कार की ओर जाने वाले मार्ग पर निरन्तर दृढनिश्चय के साथ कदम बढ़ाते चले।

ईश्वरीय आशीर्वाद आपको प्राप्त हो।

८

िचार परिशोधन

सकारात्मक सोच की शैली सबसे महत्वपूर्ण कला है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को प्रवीण होना चाहिए। लोग स्कूल और कालेज मे पढकर अनेक प्रकार की प्रतिभा प्राप्त करते हैं। परन्तु, जब तक मन को सम्हालने की विद्या नहीं आ जाती तब तक अन्य सभी शिक्षायें खोखली हैं।

अधिकांश लोगों के लिए जब परिस्थितियां अनुकूल रहती हैं, वातावरण ठीक–ठीक और उनके अनुसार होता है, तो उनका मन प्रफुल्लित तथा धनात्मक अवस्था में रहता है। उन्नत और रचनात्मक मनः स्थिति बनाए रखने के लिए अधिकतर व्यक्ति वाह्य परिस्थितियों पर निर्भर रहा करते हैं। परन्तु सकारात्मक सोच वह कला है जिसके द्वारा विषम परिस्थितियों और निराशाजनक समस्याओं के मध्य भी आपका मन धनात्मक स्थिति में ही रहता है। इस कला को कैसे विकसित किया जाय इस दिशा मे योग दर्शन कुछ व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रस्तुत करता है।

अचेतन मन के संस्कारों में परिवर्तन

रचनात्मक चिन्तन के अभ्यास के लिए मन की कार्यप्रणाली के विषय में स्पष्ट जानकारी करनी होगी। आपके चेतन मन का सम्बन्ध

अचेतन मन से है। अचेतन मन मे सस्कार विद्यमान रहते है जो एक जन्म के नही बल्कि कई जन्मो से आपके मन मे बने हुए है। ये सस्कार एक साथ प्रतिफलित नहीं होते। जो सस्कार प्रतिफलित होने वाले है, उन्हे वासना कहा जाता है।

वासना, संस्कारों से निकलने वाले अकुर के समान है। वासना से विचार तरंग अथवा वृत्तियाँ उत्पन्न होती है। जब आप अपने मन का द्रष्टा भाव से निरीक्षण करेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि यद्यपि वाह्यरूप से कोई क्रिया नहीं हो रही है, फिर भी आपके मन मे विचारो की बिजली चमकती रहती है। विविध प्रकार की धारणा, भाव और कल्पनायें उठती रहती हैं। ये सभी अचेतन मन में संग्रहित सस्कारो से उत्पन्न विकीरण है जो वासनाओ और वृत्तियों के रूप मे अवचेतन मन में उत्पन्न होती है।

जब आप स्वय को अधिकाधिक अनुशासित कर लेंगे तो मन में विचारों के उठते ही उन्हे ज्ञात कर सकेंगे। उदाहरण के लिए जब आपके मन में क्रोध, उद्विग्नता, राग, द्वेष अथवा अन्य कोई ऋणात्मक विचार उत्पन्न होता है तो आप इनको आरंभ में ही समझ लेंगे कि ये अवांछनीय विचार है। उन्हें आप आरभ में ही समाप्त कर सकेंगे।

इस अवस्था मे किसी बुरी वृत्ति अथवा विचार तरंग को रोकना सहज होता है। जब विचार अचेतन की गहराई से उठ रहे होते है, तो उन्हें दूर करना आसान है। जिस प्रकार एक छोटी चिनगारी को भयंकर अग्नि में परिवर्तित होने के पूर्व अगुलियो के बीच दबाया जा सकता है। वैसे ही इन विचारों को आरंम्भिक अवस्था मे ही दूर किया जा सकता है। परन्तु यदि इन वृत्तियो की आप उपेक्षा कर देगे तो यही बहुत बडी समस्या के रूप में आपके समक्ष खड़ी हो जायेगी।

अधिकांश लोगों के साथ यही होता है। उनमे जब ऋणात्मक विचार उठता है, तो वे इसे पहचान भी नहीं पाते कि उनके मन में कोई बुरा विचार उठ रहा है। इसके विपरीत अधिकतर लोग उसे और बढाने लगते है, उन्हें विकसित होने का अवसर देते है। उदाहरण के लिए आपके

मन मे जब किसी के प्रति द्वेष की भावना उत्पन्न होती है तो बुद्धि अपने तर्क से इस भावना को और प्रबल बनाने लगती है। आप स्वय को यह विश्वास दिलाने लगते है, कि आपके मन मे द्वेष और घृणा का जो भाव उठ रहा है वह सर्वथा उचित है। जब आप वृत्तियो को अपनी बुद्धि तथा तर्कों से उचित ठहराते है, तो इनका रूपान्तरण शीघ्र ही काम (इच्छा) मे हो जाता है।

काम अर्थात् इच्छा उत्पन्न होने का अर्थ है कि आप उस भाव के प्रभाव मे पूरी तरह आ गए हैं। अब आप अपने मन में उठे विचारो को कार्य रूप मे परिवर्तित करने का प्रयास आरंभ कर देते है। चूंकि आप किसी से घृणा करते है, तो अब आप उसे दु खी करने की दिशा मे भी प्रयत्नशील हो जाते है। इस स्थिति मे आपकी इच्छायें (काम) तृष्णा मे बदल जाती है। आप किसी भी प्रकार अपनी इच्छा को पूर्ण करना चाहते है। इसके कारण आप कर्मो मे संलग्न हो जाते है, जिससे आपको सुख–दुख. के रूप में विभिन्न अनुभव होते है। इन भोगो का सस्कार आपके अचेतन मन में सग्रहित हो जाता है। इस प्रकार पुन· इन संस्कारो से नई वासना का जन्म होता है और आप का मन इसी चक्र मे निरन्तर घूमता रहता है।

इस प्रकार सस्कारों से वासना, वासनाओं से वृत्ति, वृत्तियो से काम (इच्छा), काम से तृष्णा (प्रबल इच्छा), तृष्णा से कर्म और कर्मो से संस्कार का निर्माण होता है।

जीवन कला की सफलता इसमें है, कि आप अपने बार–बार के प्रयास से अचेतन मे सग्रहित हो रहे सस्कारों के स्वरूप को ही बदल दें। एकाएक अपने संस्कारों को आप शुभ अथवा धनात्मक नही बना सकते। सकारात्मक सोच की कोई पुस्तक पढकर इसके महत्व को आप

भले ही अच्छी तरह समझ ले, परन्तु जब तक बार–बार इस दिशा मे प्रयास नहीं करेगे तब तक आपको सफलता नहीं मिल सकती।

ध्यान, मानसिक विस्तार की एक क्रिया

कुछ बातों को समझ कर उनका अभ्यास करना आवश्यक है। सबसे पहले यह जरूरी है कि आप अपने दैनिक जीवन को समता पूर्वक सुनियोजित ढंग से व्यतीत करें। प्रातःकाल उठकर ध्यान करें। अपने मन को समस्याओं तथा व्यावहारिक चिन्ताओं से मुक्त कर शान्त और निर्भय बनाने का चेतन प्रयास करें। रचनात्मक चिन्तन करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है। अपने मन को विस्तृत होने के लिए अवसर प्रदान करें।

मन में कुछ ऐसी जगह बनायें जहॉ कोई चिन्ता और समस्या न हो। समान्यतः आंपके मन में बहुत सारी बातें भरी पड़ी होती हैं। यह हमेशा भूत वर्तमान और भविष्य की बातों में उलझा होता है। जब मन कई चीजों और बातों मे उलझा हो तो आप अपनी समस्याओं के प्रति वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण नहीं बना सकते हैं। तब छोटी समस्याये भी विकट प्रतीत होती है और आप अनुभव करते हैं कि इसके बीच आपका दम घुट रहा है।

नित्य प्रति शान्त मन स्थिति विकसित करने का प्रयास करे। उसे धारणा, ध्यान अथवा प्रार्थना कुछ भी कहे, परन्तु इसका अभ्यास प्रतिदिन किया करें। अपने मन को तनाव रहित रखें और उस अवस्था में स्वयं को समस्याओं से ऊपर उठाने का प्रयास करें। अनुभव करें परमेश्वर निरन्तर आपकी सहायता कर रहे हैं। आपका अन्तर्वासी परमात्मा ने चारो ओर से आपके व्यक्तित्व को अपने संरक्षण में सुरक्षित कर रखा है।

इस प्रकार की भावातीत अवस्था प्राप्त करते ही आपके व्यक्तित्व मे एक नवीन शक्ति प्रविष्ट हो जाती है। भले ही आपको इस अनुभव

की एक किरण की ही अनुभूति क्यो न हुई हो। परन्तु इसी से आपको अपनी समस्याओ को सुलझाने की अन्तर्दृष्टि प्राप्त हो जाएगी। तब बहुत बडी समस्या भी छोटी तथा साधारण प्रतीत होने लगती है। इस प्रकार ध्यान के नियमित अभ्यास से शान्ति और निर्भयता के संस्कार उत्पन्न करे।

जप, एक मानसिक मिष्ठान्न

जप, मन को सम्हालने की एक अन्य महत्वपूर्ण विधि है। भारतीय सन्तों ने नाम जप की महिमा का बार–बार गुणगान किया है तथा इसके महत्व पर प्रकाश डाला है। महात्मा गँधी नाम जप के अत्यन्त हिमायती थे। उनकी अन्तिम अवस्था में भी उनके होठो पर राम नाम था।

अपनी पारिवारिक परम्परा, रूचि अथवा गुरु से मंत्र दीक्षा लेकर किसी मत्र का चुनाव करे। राम, कृष्ण, नमः शिवाय अथवा अन्य किसी भी मंत्र को आप चुन सकते हैं। स्वेच्छा से किसी मंत्र को चुनने के बाद आराम से शान्त और तनाव रहित होकर बैठ जाइए और अपने मन में मंत्र को गहराई से प्रवेश होने दीजिए। मानसिक रूप से इसका बार–बार जप कीजिए। जप करते समय आपको वैसा ही आनन्द आना चाहिए मानो आप कोई मंनो वैज्ञानिक मिष्ठान्न का आनन्द ले रहे हैं। ईश्वर का नाम और मंत्र जप में आनन्द आना चाहिए। इसे भाव और रूचि से जपना चाहिए तथा ऐसा करने में आपको एक रहस्यमय आनन्द का अनुभव होना चाहिए। अभ्यास के द्वारा आप ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकते हैं।

जप धीरे– धीरे एक विशेष गति और लय से करें। अनुभव करे, कि प्रत्येक जप के साथ आप ईश्वर को स्पर्श कर रहे है, अथवा ईश्वर आपको स्पर्श कर रहे है। प्रत्येक जप के साथ आप अपने अन्तर्मन में ईश्वरीय विद्यमानता का अनुभव कीजिए। अनुभव करे कि परमात्मा समस्त संसार को धारण करने वाले है। वे ही इस

सृष्टि के पोषक है और इसी परमात्मा के चरणो मे आप स्वय को समर्पित करते है।

श्रद्धा और भक्ति से किए गये जप के कारण आपके अचेतन मन मे शुभ सस्कारों का उदय होता है। इसलिए यदि आपके पीछे जप तथा ध्यान की शक्ति है तो आप किसी भी वाह्य परिस्थिति का कुशलतापूर्वक सामना कर सकते है। जिस स्थिति के कारण आप विक्षिप्त हो कर असतुलित और व्यग्र हो जाते थे, जप और ध्यान के अभ्यास के बाद उसे द्रष्टाभाव से देखते हुए दक्षता पूर्वक सामना करने लगते है। चाहे कुछ भी क्यो न हो जाय, आप आन्तरिक रूप से शान्त, निर्भय और संतुलित रहकर अनासक्त भाव से उसे सह लेंगे।

उत्कृष्ट विचारों का संग्रह करें

दूसरी महत्वपूर्ण बात है–स्वाध्याय अथवा सद्ग्रन्थो का अध्ययन। आप गीता, रामायण, उपनिषद्, बाइबिल अथवा जो भी प्रेरणादायक सद्ग्रथ है उनका अध्ययन कीजिए। प्रतिदिन निश्चित समय के लिए इन ग्रन्थो मे से किसी एक का अध्ययन कीजिए तथा जो विचार आपको प्रेरणा दें उन्हे कहीं नोट कर लीजिए।

सकारात्मक निश्चय

सकारात्मक सोच मे पूरी तरह स्थिर होने के लिए सकारात्मक निश्चय करने मे प्रवीण होना आवश्यक है। आपको यह तथ्य अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि आप जैसा सोचते है, वैसी ही परिस्थितियां आपके समक्ष उपस्थित होने लगती है। आपके विचार एक प्रकार के चुम्बक के सदृश्य हैं। यदि आप बुरे विचार कर रहे हैं, तो आप अन्तत: बड़े ही रहस्यमय ढंग से अपने जीवन मे बुरी स्थितियो को ही आकर्षित कर लेते हैं। इसी प्रकार यदि आप शुभ और सकारात्मक विचार करते है,

तो आपके जीवन मे अनुकूल और शुभ परिस्थितियॉ आने लगती है। दु ख, कष्ट और विपरीत परिस्थिति में भी आपको ईश्वरीय कृपा का अनुभव होना चाहिए।

आपको विषम परिस्थितियो मे भी कोई न कोई आध्यात्मिक मूल्य और सदेश है, इसका विश्वास रहना चाहिए। विपत्ति के समय भी दृढता पूर्वक यह निश्चय कीजिए–"जीवन मे कुछ भी अर्थहीन नही है। इसलिए मुझे दु खी नहीं होना चाहिए। मुझे धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए। ईश्वरीय अनुकम्पा पर टिका और दिव्य योजना से सचालित इस सुव्यवस्थित संसार मे विषाद का कोई स्थान नहीं है।" यदि आप ऐसी समझ विकसित कर लेते हैं, तो आप प्रभावशाली ढग से सकारात्मक निश्चय का अभ्यास कर रहे है।

यदि आप अपने व्यक्तित्व मे कोई प्रकार का दोष अथवा दुर्गुण पाते है, तो प्रतिदिन इस दुर्गुण के विपरीत जो सद्गुण है उसे दृढता पूर्वक अपने व्यक्तित्व मे लाने का निश्चय कीजिए। मान ले कि आप तुनक मिजाजी हैं। बात–बात पर उत्तेजित हो जाते हैं, तो इस को पहचान कर दृढता पूर्वक निश्चय करें–"मैं अत्यन्त धैर्यवान हूँ। मेरा स्वभाव क्षमाशील है।" बुद्ध, ईसामसीह तथा अन्य महामानव जो इस सद्गुण के जीवन्त रूप थे, के विषय मे सोचिए। यह भाव विकसित करें कि आप उनके ही रूप मे उन्ही के समान बन रहे है। बार–बार सकारात्मक भावो को दृढता से मन मे स्थापित कीजिए। इसका चमत्कारी प्रभाव होगा।

प्रतिपक्ष भावना

आपके मन को सुनियोजित ढग से प्रशिक्षित और विकसित करने के लिए राजयोग मे प्रतिपक्ष भावना नाम की एक विशेष साधना बताई गई है। सर्वप्रथम आप आत्म निरीक्षण करे। ऐसा करने से आपको अपने दोषों का ज्ञान होगा। आप पायेगे कि आपके व्यक्तित्व में कुछ दुर्गुण

हैं; जिन्हे दूर किए बिना आप आत्मिक विकास के पथ पर अग्रसर नही हो सकते है। इन्हे आप कैसे दूर कर सकते है?

अपने दोषो के कारण चिन्तित नही होइए और नहीं इन्हे दबाने अथवा छुपाने का प्रयास कीजिए। इसके बदले उस दोष के स्थान पर उसके विपरीत जो सद्‌गुण है उससे प्रतिस्थापित कीजिए। आन्तरिक रूप से दृढता पूर्वक निश्चय कीजिए कि आप उस सद्‌गुण से पूर्णत सम्पन्न हैं। आपका आन्तरिक आत्म स्वरूप उस सद्‌गुण का जीवन्त स्वरूप है। यदि आप इस अभ्यास को बनाये रखेंगे तो आप में वहीं सद्‌गुण स्थाई रूप से प्रकट हो जाएगा और आपका दोष निर्मूल हो जाएगा।

उदाहरण के लिए मान लें कि अन्य लोगों के समान आप भी क्रोध करने वाले व्यक्ति हैं। जब आपको ऐसा अनुभव होने लगे कि क्रोध आपके व्यक्तित्व में एक भयकर दोष है तो आप यह नही कहें कि–"मैं क्या करूँ ? अपने क्रोध को मैं रोक नही पाता नही चाहते हुए भी क्रोध आ जाता है।" इसके विपरीत दृढ़ता पूर्वक निश्चय कीजिए–"मेरी अन्तरात्मा शान्त स्वरूप है। मैं क्षमाशील हूँ। मैं स्वभाव से ही उदार हूँ। क्रोध पर विजय प्राप्त करने की क्षमता मुझ में है। यदि आप प्रतिदिन ऐसा निश्चय करेंगे तो धीरे–धीरे निश्चित रूप से आप क्रोध करने के दोष से मुक्त हो जायेगें।

जब आप किसी दुर्गुण पर विजय प्राप्त कर लेते है, तो आपके मन में एक विशेष प्रकार की ऊर्जा उत्पन्न होती है। आपको एक रहस्यमय शक्ति प्राप्त होती है। आप में विचार शक्ति का उदय होता है। महामानवों की महानता का यही रहस्य है। उन लोगों ने अपने मन का निरीक्षण किया, अपने दोषों को पहचाना और चाहे कितना भी समय क्यों न लगे उन्हे दूर करने की दिशा में वे जुट गए।

आत्मनिरीक्षण का अभ्यास

आध्यात्मिक साधको के लिए आत्मनिरीक्षण करना अत्यन्त आवश्यक है। आत्मनिरीक्षण का अर्थ है अपने व्यक्तित्व की गहराई मे

स्वय झाककर देखना कि इसमे कौन–कौन से दोष आ गए है तथा कहॉ–कहॉ सुधार की आवश्यकता है। ऐसे बहुत लोग हैं जिन्हें अपने दुर्गुणो के विषय मे कोई ज्ञान नहीं होता। एक व्यक्ति क्रोध से कॉप रहा होता है, उसकी ऑखो से क्रोध के अगारे बरस रहे होते हैं, फिर भी यदि उसमें आत्मनिरीक्षण का अभाव है तो उससे यह पूछे जाने पर कि वह क्यों क्रोधित है तो वह कहता है "मै" क्रोधित नही हूॅ। मैं तो शान्त और सतुलित हूॅ।"

अधिकाश व्यक्ति दूसरो के दोष ही देखा करते हैं। परन्तु आध्यात्मिक साधक को अपने अन्दर झांकना चाहिए। महाभारत की एक अत्यन्त प्रचलित कथा है। गुरु द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर और दुर्योधन को एक–एक कार्य सौपा। युधिष्ठिर को कहा गया कि उसकी दृष्टि में जो सबसे बुरा व्यक्ति हो उसे खोज़ कर लाये और दुर्योधन को सर्वगुण सम्पन्न, सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति खोजकर लाने को कहा गया। कुछ दिनों के बाद युधिष्ठिर लौट कर गुरु द्रोण से बोले–"मुझे ससार मे कोई बुरा व्यक्ति नहीं मिला। सबो में कोई न कोई गुण अवश्य है। एक मैं ही हूॅ जिसमे अनेको प्रकार के दोष और दुर्गुण है। ससार का सबसे दुर्गुणी व्यक्ति मैं स्वयं हूॅ।" चूंकि युधिष्ठिर आत्म निरीक्षण करते थे इस कारण उन्हे अपने दुर्गुणों का अच्छी तरह ज्ञान था। वे अपनी आन्तरिक शुद्धता और विकास के लिए उत्सुक थे। इस कारण उन्हे अपने मे बहुत सारे दोष दिखाई पड़ते थे। जब वे किसी दूसरे को देखते तो उन्हे उसकी अच्छाइयॉ ही दिखाई पडती थी। इसलिए उन्हें अपने से बुरा कोई नहीं मिला।

दुर्योधन दूसरी प्रकृति का था। उसे प्रत्येक व्यक्ति मे दोंष ही दिखाई पड़ता था। उसने गुरु द्रोण से कहा–"ससार मे कोई भी सर्वगुण सम्पन्न नहीं है। आप में भी अनेक दोष है। सबसे बडा दोष तो यह है कि आप वृद्ध है।" अपनी तरफ देखकर बडे ही ग़र्व से उसने कहा–"मेरी ओर देखिये। परमात्मा ने मुझे सर्वगुण सम्पन्न बनाया है। मुझ में कोई भी दोष नहीं। मैं सर्वश्रेष्ठ ढग से सोचता हूॅ और जो कुछ

भी करता हूँ वही किसी कार्य को करने की सर्वश्रेष्ठ विधि है।"

इस कथा मे दो प्रकार के लोगों की ओर इगित किया गया है। पहले प्रकार के वे लोग है जिन पर रजस और तमस का प्रभाव होता है। ऐसा व्यक्ति आत्मनिरीक्षण नही किया करता है। दूसरे प्रकार के लोग वे है जिन पर सात्विकता का प्रभाव होता है और वे आत्मनिरीक्षण किया करते हैं। युधिष्ठिर के समान आपको भी अपने मन की गहराई मे देखना चाहिए। अपने दोषो को पहचानना चाहिए। दूसरो के समक्ष अपने सद्गुण को प्रमाणित करने की आवश्यकता नही हैं। आप स्वय के प्रति पूर्णत ईमानदार बने। क्योंकि यदि आपमें कोई सद्गुण है तो उससे आप को ही प्रसन्नता और आनन्द प्राप्त होगा।

दूसरे लोग आपको देख कर कुछ देर के लिए भले ही यह कह सकते हैं–"यह व्यक्ति बहुत विनम्र और सद्गुण सम्पन्न है।" परन्तु यह अनुसंशा क्षणिक है। इससे आपको आध्यात्मिक मार्ग पर प्रगति करने में कोई सहायता नहीं होती है। इससे कहीं महत्वपूर्ण है अपनी ही दृष्टि में स्वय का मूल्याकन। आपकी वास्तविक खुशी इस बात पर निर्भर करती है कि आप अपने मन को ईमानदारी पूर्वक कैसे प्रयोग मे लाते हैं, तथा उसकी वृत्तियो को किस प्रकार सम्हालते हैं।

अपने समक्ष अपना लक्ष्य बनाए रखिए

अपने मन के समक्ष जीवन के लक्ष्य–आत्मसाक्षात्कार को प्रस्तुत कीजिए। आप जब ऐसा करने मे एक बार सफल हो जाते है तो सकारात्मक चिन्तन करने का राजमार्ग आपके लिए खुल जाता है। जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य के प्रति समर्पित होने मे ही सर्वोत्त्च प्रकार का सकारात्मक चिन्तन संभव है। जब तक जीवन का लक्ष्य स्पष्ट नही है तब तक सकारात्मक चिन्तन की क्रिया सीमित और सापेक्षिक रहेगी। ईश्वर साक्षात्कार जब आपके जीवन का लक्ष्य बन जाता है तो आप मे आत्मा की प्रसुप्त शक्तियां प्रकट होने लगती है।

इसलिए साधक अथवा जो भी मन को प्रशिक्षित करना चाहते है, उन्हें मन के साथ कार्य करते समय गहरे रोमाच और साहसिक यात्रा की चुनौती का अनुभव होना चाहिए। क्योकि मन सबसे बडी शक्ति है। मन चमत्कार कर सकता है। इतिहास बार–बार प्रमाणित करता है कि सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक स्वरूप, राजनीतिक धारा और धार्मिक आन्दोलन कैसे कुछ शक्तिशाली मन के धनी महामानवों के द्वारा परिवर्तित हो जाया करते है। यही शक्ति प्रत्येक व्यक्ति मे है। जब आप काम, क्रोध, लोभ, अहकार, द्वेष, को विनम्रता, प्रेम एव करुणा जैसे सद्‌गुण से प्रतिस्थापित कर लेंगे तो वह शक्ति आप मे भी विकसित हो जाएगी।

अपने जीवन को सत्संग से परिपूर्ण कीजिए

सकारात्मक सोच के लिए सत्सग अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अपने आपको वैसे वातावरण मे रखिए जहॉ आपकी आन्तरिक शक्तियों के विषय मे चर्चा होती है। जहॅ मन के रहस्यो, ध्यान के आनन्द और भक्ति की बाते होती हो। ऐसे वातावरण के सम्पर्क मे रहना ही सत्संग है।

सेवा में आनन्द पाइए

इन सबों के साथ अपने जीवन को सेवामय बनाइए। दूसरों की सेवा में ही अपनी शक्ति लगाइए। इस बात का विशेष ध्यान रखिए कि आपकी शक्ति का सदुपयोग हो रहा है। यदि केवल अपने लिए जीने लगेगे तो आपका जीवन जड बन जाएगा।

बुद्ध के एक उपासक की कथा है। उसमें उदार दृष्टि का सर्वथा अभाव था। एक साधना कक्ष में बुद्ध की कई मूत्तियां थीं। उसने उनमें से एक मूर्ति को चुनकर अपना इष्ट बना लिया और उसी के समक्ष प्रति दिन अगरबत्ती और दीप जलाने लगा। अगरबत्ती की सुगन्ध और दीपक

का धुआ अन्य मूर्तियो की ओर भी जाने लगा। परन्तु उपासक यही चाहता था कि उसकी अगरबत्ती की सुगन्ध और दीप का प्रकाश केवल उसी एक मूर्ति जिसे वह इष्ठ समझता था तक सीमित रहे। इस उद्देश्य से उसने अपने बुद्ध के चारो ओर एक पर्दा लगा दिया जिससे प्रकाश और सुगन्ध दूसरी ओर न जा सके। इस प्रकार दीपक से निकला धुंआ केवल उसी की मूर्ति तक ही सीमित होने लगा परिणाम स्वरूप कुछ दिनों के बाद उसकी मूर्ति धुंए से काली पड़ गई।

इसी प्रकार जब आपका लक्ष्य केवल स्वयं को सुखी और आनन्दित रखना हो जायेगा जब आपके जीवन का सब कुछ अपने स्वार्थ तक सीमित रहेगा तो कुछ समय के बाद आपकी आत्मा काली पड़ जाएगी। इसके विपरीत जब आप अपने समक्ष अपने महतस्वरूप परमात्मन को रखेंगे और मानवता की सेवा में आनन्दित होगे, तो आपमें कर्मयोग की भावना स्वत. उत्पन्न हो जाएगी। आप सेवा से सुख प्राप्त करेगे। ऐसी भावना विकसित करने से आपका जीवन सुख, शान्ति और आनन्द से परिपूर्ण हो जाएगा। आप अपने दोषो को सहज रूप से दूर कर मन को धनात्मक दिशा प्रदान कर सकते हैं। परन्तु सेवा भावना के अभाव में सकारात्मक चिन्तन करना अत्यन्त कठिन हो जायेगा। आप अपने मन मलों को देर नहीं कर सकते ।

सच्ची शिक्षा

इसलिए अपने दैनिक जीवन में ध्यान, जप सकारात्मक निश्चय, सत्सग और सेवा का अभ्यास कीजिए। अपने मन को ऋणात्मक विचार और बुरे भावो से नहीं भर लीजिए। अपनी अन्तर्वासी आत्मा जो स्वभावतः शुभ तथा धनात्मक है की शान्ति को प्रस्फुटित होने दीजिए। यदि आप ऐसा करेंगे तो आप को ऐसे स्वस्थ मन की प्राप्ति होगी जिसमें केवल सकारात्मक और शुभ विचार ही उठा करेंगे और यह एक महान उपलब्धि है।

आप महान डाक्टर, वकील, वैज्ञानिक, प्रोफेसर, न्यायधीश अथवा राजनेता हो सकते है। परन्तु, यदि आप अपने मन को सम्हालने की कला नही जानते हैं, तो आपका ज्ञान व्यर्थ है। जीवन के वरदानों का आनन्द लेने के लिए मन को सम्हालने की कला विकसित करना आवश्यक है।

जब आप निराश होते हैं, असफल होते हैं, अथवा कोई अप्रत्याशित समाचार सुनते हैं। तो आप क्या करेंगे? यदि आपको कोई अपमानित कर रहा हो तो आपको क्या करना चाहिए? यदि आपका मन भूतकाल की बुरी बातों का स्मरण कर दु:खी तथा निराश हो रहा हो तो आपको क्या करना चाहिए? अपने आपको निम्नमन के बन्धन से छुडाकर उच्च मन के प्रभाव मे आप कैसे लायेंगे?

इन परिस्थितियों में मन को सम्हालने की कला ही जीवन की सबसे महान शिक्षा है। इस कला को सीखना ही सच्ची शिक्षा है। इसके अभाव में सभी वाह्य शिक्षायें खोखली हैं। स्वरूपत: आप परमात्मा–ब्रह्मन् हैं। सकारात्मक सोच के द्वारा अपने अन्तर्मन मे विद्यमान अनन्त शक्ति को उद्‌घाटित कीजिए और सुख, समृद्धि, स्वास्थ्य, सुयश और शान्ति क सर्वोच्च शिखर पर आसीन होइए।



ॐ

मयामी, फ्लोरिडा
यू० एस० ए०

दिव्यात्मन्,

नमस्कार!

जीवन की विषम परिस्थितियों में भी अपने मन में निराशाजनक विचार मत आने दो। बल्कि तुम्हारा चित्त आनंद की भावना से प्रमुदित होना चाहिए।

ध्यान रखो कि तुम्हारे जीवन में कोई दैवी विधान है, जिसका तुम्हारे अहं को ज्ञान नहीं है।

सभी परिस्थिति में मानसिक रूप से भगवन्नाम का जप करो तथा अपने विचारों को ईश्वर पर केन्द्रित रखो। तुम्हारे हृदय में एक अवर्णनीय शांति का उदय होगा।

अपने कर्तव्यों का इस भावना से पालन करो कि "मैं भगवान के हाथ का शस्त्र हूँ।"

ईश्वर तुम्हें मोक्ष की ओर प्रवृत्त करे!

प्रेम – ॐ सहित

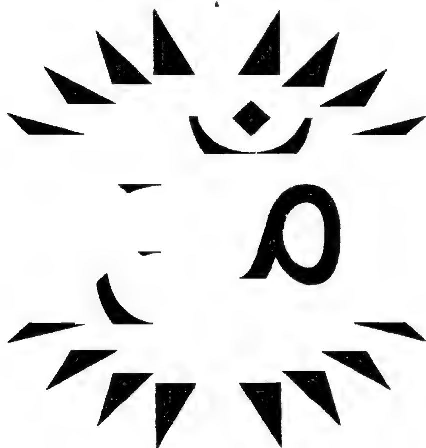
आत्मस्वरूप

स्वामी ज्योतिर्मया

ॐ

इन्टरनेशनल योग सोसायटी

स्वामी ज्योतिर्मयानन्द आश्रम
एक परिचय



इन्टर नेशनल योग सोसायटी

लाल बाग, लोनी

गाजियाबाद, 201102, उ0 प्र0

टेली, (0575)600237

दिल्ली लोकल - 8600237

शहादरा दिल्ली से ७ कि मी तथा ऐतिहासिक लालकिला से लगभग १५ कि मी उत्तर पूर्व, दिल्ली-उ० प्र० सीमा पर ५००० वर्गगज में फैला यह आश्रम अत्यन्त शान्त और सुन्दर परिवेश में निर्मित है। इसके चतुर्दिक हरियाली एवं पुष्पों से भरे उपवन हैं, जो प्राचीन ऋषि-महर्षियों के दिव्य आश्रम की याद दिलाते हैं। आश्रम के भव्य-भवन में आधुनिक सुविधाओं से युक्त निवास स्थल के अतिरिक्त विशाल सत्संग भवन, सद्ग्रन्थों से भरा पुस्तकालय अनुभवी एवं एम बी बी एस, एम डी डिग्री प्राप्त चिकित्सक युक्त अस्पताल और निजी प्रिंटिंग प्रेस है। यहाँ नियमित सत्संग स्वाध्याय, साधना और सेवा-कार्य चलते रहते हैं। इन सबों से बढ़कर आश्रम परिसर मानवता के भाग्य को परिवर्तित करने की शक्ति से पूर्ण, पूज्य गुरुदेव योगमार्तण्ड श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्दजी के दिव्य और गत्यात्मक आध्यात्मिक स्पन्दनों से परिव्याप्त है।

आरंभिक आधार -३ फरवरी १९७४ समस्त आध्यात्मिक जगत के लिए एक अत्यन्त शुभ दिन था। पूज्य गुरुदेव श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्दजी के जन्म दिवस पर आयोजित सत्संग सभा में स्वामीजी के कार्यों को भारत में प्रसारित करने के उद्देश्य से युवक संयोजक शशिभूषण मिश्र ने "स्वामी ज्योतिर्मयानन्द योग संस्थान" नामक संस्था की स्थापना की। भारत में इन्टरनेशनल योग सोसायटी का यही आरंभिक आधार बना।

इन्टरनेशनल योग सोसायटी

स्वामी जी ने १९६९ में ही इस सोसायटी की स्थापना अमेरिका में की थी। परन्तु, जब "स्वामी ज्योतिर्मयानन्द योग संस्थान" के माध्यम से स्वामीजी की आध्यात्मिक क्रियायें भारत में बढ़ने लगी, तो शिष्यों के आग्रह पर मार्च १९७८ में "इन्टरनेशनल योग सोसायटी" की स्थापना स्वामीजी ने किया। १९७८ से १९८४ अगस्त तक इसकी समस्त क्रियायें पटना (बिहार) से होती रही। १९८४ में आश्रम के लिए भूमि मिलने पर इसे दिल्ली सीमा पर स्थित लालबाग कॉलनी, गाजियाबाद उ० प्र० में स्थानान्तरित कर दिया गया।

संचालक

आश्रम की समस्त गतिविधियाँ पूज्य गुरुदेव श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी महाराज के निर्देशानुसार उनके अनन्य भक्त एवं समर्पित शिष्य **योगिरत्न डॉ० शशिभूषण** मिश्र एम बी बी एस, डी अर्थो, एस. आर एफ एवं डॉ० **प्रतिभा मिश्र** एम बी. बी एस, डी जी ओ, एम डी की देख-रेख में चलती हैं।

सोसायटी के उद्देश्य

१ जाति, लिंग, सम्प्रदाय से ऊपर उठ कर सबों को एक ही दिव्य जीवनकी अनुभूति कराते हुए सभी धर्मों के सन्त, महात्मा, अवतार, गुरु तथा आध्यात्मिक उपदेशों में वर्तमान मूलभूत एकता को उद्घाटित कर, संसार के समस्त धर्मों में सामन्जस्य विकसित करना। आध्यात्मिक जीवन के मूल्यो तथा दर्शन का प्रसार करना।

२. योग-वेदान्त और भारतीय-दर्शन की शिक्षा देने के लिए नियमित एवं सुनियोजित कक्षायें चलाना।

३ जीवन के शाश्वत आध्यात्मिक मूल्यों के आधार पर मानवता के सांस्कृतिक उत्थान मे योगदान करना। सभी लोगों में आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने की प्रेरणाग्नि प्रज्वलित करने के लिए गोष्ठी, परिचर्चा, सभा तथा सत्सग आयोजित करना। आध्यात्मिक साहित्यों का प्रकाशन तथा शैक्षणिक संस्थाओं का निर्माण करना।

४ रोगी तथा पीडित मानवता के लिए अस्पताल, लावारिस बच्चों विधवाओं तथा वृद्धों की देखभाल के लिए विशेष प्रकार के अनाथालयों की व्यवस्था करना। आध्यात्मिक साधकों का मार्गदर्शन करना।

गतिविधियाँ

योग-साधना शिविर -समय-समय पर साधकों के लिए योग-साधना शिविर आयोजित किया जाता है। विद्यार्थियों और बच्चो के लिए अलग शिविर लगाये जाते हैं। इसमें साधना सम्बन्धी पूर्ण प्रशिक्षण दिया जाता है।

पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद एवं प्रकाशन .-पूज्य गुरुदेव की अँग्रेजी पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद करने का कार्य निरन्तर चल रहा है। इस समय तीस पुस्तकें अनूदित हो चुकी हैं तथा अन्य कई पुस्तकों का अनुवाद प्रगति पर है। इनका प्रकाशन भी आश्रम के अपने प्रेस से होता है।

रोगियों की सेवा :-आश्रम के अस्पताल- स्वामी ज्योतिर्मयानन्द चैरिटेबल हॉस्पिटल में सभी प्रकार के रोगों की चिकित्सा की जाती है। बच्चों को नि शुल्क रोग प्रतिरोधक टीके लगाने की भी व्यवस्था है।

'योगाञ्जलि' मासिक पत्रिका का प्रकाशन –पूज्य गुरुदेव के उपदेशों को भारतीय जनमानस तक पहुँचाने के लिए 'योगाञ्जलि' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन विगत कई वर्षों से हो रहा है। इसमें स्वामीजी द्वारा योग, वेदान्त-दर्शन, सदाचार तथा जीवन की समस्याओं को गहन अन्तर्दृष्टि तथा दार्शनिक आधार पर सुलझाने के लिये प्रेरक निर्देश प्रकाशित किए जाते हैं।

दिव्य ज्योति पब्लिक स्कूल .-आरंभ से ही बच्चों में आध्यात्मिक संस्कार स्थापित करने के साथ-साथ उच्चस्तरीय शिक्षा की व्यवस्था की गयी है। छोटे बालकों को आसन, प्राणायाम, ध्यान, प्रार्थना सिखाए जाते हैं तथा हिन्दी/अँग्रेजी माध्यम से शिक्षा दी जाती है।

वृद्धों की सेवा :-आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर, अवकाश प्राप्त अथवा जो वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, उनके रहने और साधनामय जीवन व्यतीत करने की आदर्श सुविधा आश्रम में उपलब्ध है।

आपके सहयोग का स्वरूप

ज्ञान यज्ञ :-आप आश्रम की पुस्तकों के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर पूज्य गुरुदेव के दिव्य कार्य में सम्मिलित हो, ज्ञान-यज्ञ कर सकते हैं।

श्रम एवं समय दान : श्रम तथा समय देने की एक योजना बनाई गई है। ऐसे व्यक्ति अपने दैनिक जीवन का कुछ समय सोसायटी को देकर इसके कार्यों के प्रसार में सहयोग कर सकते हैं। सप्ताह मे किसी एक दिन के लिए भी सेवा कार्य किया जा सकता है।

नियमित अनुदान :- समर्थ व्यक्ति नियमित अनुदान देकर एक महान योजना को क्रियान्वित करने में सहयोग दे सकते हैं। नियमित अनुदान करने वाले प्रत्येक महानुभाव को प्रतिमाह कोई न कोई साहित्य निःशुल्क भेजा जाता है। आश्रम के पुस्तकालय में आप नई-पुरानी पुस्तकें, अस्पताल के लिए दवाइयाँ तथा कार्यालय सम्बन्धित अन्य चीजों का दान देकर सहयोग दे सकते हैं।

सदस्यता

वे सभी सदस्य जो सोसायटी के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अपना सहयोग देने के लिए सहमत हैं, इसके सदस्य बन सकते हैं।सोसायटी के सदस्य निम्न प्रकार के हैं :-**संस्थापक सदस्य:-** जिन लोगों ने इस सोसायटी की स्थापना की है, वे इसके सस्थापक सदस्य हैं।

आजीवन सदस्य :-सोसायटी को एक बार २५०० रु० देकर आजीवन सदस्य बना जा सकता है। इन सबों को आश्रम की हिन्दी तथा अॅग्रजी पत्रिका आजीवन नि:शुल्क भेजी जाती है तथा उन्हें आश्रम के समस्त प्रकाशनों पर ३० प्रतिशत की छूट दी जाती है।

वार्षिक सदस्य :-सोसायटी की सदस्यता के लिए ७५ रुपये वार्षिक राशि निर्धारित की गई है। ऐसे प्रत्येक सदस्य को एक वर्ष तक 'योगाञ्जलि' पत्रिका नि:शुल्क भेजी जाती है तथा अन्य प्रकाशनों पर १० प्रतिशत की छूट दी जाती है।

संरक्षक सदस्य:- आश्रम की गतिविधियों को सुचारु रूप से चलाने के लिए प्रतिमाह कम से कम ५० रुपये या अधिक राशि अनुदान में देने का जो संकल्प करते हैं, उन्हें संरक्षक सदस्य माना जाता है। ऐसे सदस्यों को आश्रम के साहित्य नि: शुल्क भेजे जाते हैं। उपरोक्त सभी प्रकार के सदस्य पूज्य गुरुदेव से पत्राचार द्वारा सम्पर्क करने और मार्गदर्शन लेने के भी अधिकारी हैं। इन सबों को योग रिसर्च फाउण्डेशन (अमेरिका) की सदस्यता स्वत. प्राप्त हो जाती है।

एक अनुपम अवसर

यदि आप वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करना चाहते हैं

यदि आप साधना के लिए उपयुक्त स्थान की खोज में हैं

यदि आप मानवता की आध्यात्मिक सेवा में जीवन अर्पित करना चाहते है

यदि आप योगवेदान्त और अध्यात्म के गहन अध्ययन के लिए इच्छुक हैं तो स्वामी ज्योतिर्मयानन्द आश्रम आप को एक अनुपम अवसर प्रदान करता है।

आश्रम कैसे पहुँचे

यह आश्रम दिल्ली उत्तर प्रदेश सीमा पर नई दिल्ली रेलवे स्टेशन से २० कि० मी० और ऐतिहासिक लालकिला से १४ कि० मी० की दूरी पर है। नई दिल्ली स्टेशन से यहाँ आने के लिए सीधे तिपहिए वाहन मिलते है। तिपहिए वाहन अथवा टैक्सी से आने वालों को लोनी बोर्डर (फ्लाई ओवर) से ५ कि० मी० उत्तर की ओर लोनी रोड़ पर चलकर २ न० बस स्टाप नामक स्थान के पास लाल बाग कालोनी में आना चाहिए। आश्रम इसी कालोनी में है।

जो बस से आना चाहें, उन्हें दिल्ली के किसी भी स्थान से बस अड्डे (ISBT) पर आना होगा जिसके पास मोरी गेट टर्मिनल है। वहीं से २६३ न० की बस चलती है जो सीधे २ न० बस स्टाप तक आती है। २ न० बस स्टाप से आश्रम १५ मिनट पैदल का रास्ता है। यहाँ से लाल बाग तक रिक्शा भी मिलता है। हवाई जहाज से आने वालों को दिल्ली के इन्दिरागाँधी एयर पोर्ट पर उतरकर टैक्सी द्वारा लोनी बार्डर से ५ कि० मी० दूर २ न० बस स्टाप (जो लोनी से डेढ़ कि० मी० पहले है) पर आकर लाल बाग कालोनी में आना चाहिए।

नोट:- यहाँ आने के लिए गाजियाबाद स्टेशन पर उतरना ठीक नहीं होगा।

श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्द जीवन परिचय

श्रीस्वामी ज्योतिर्मयानन्दजी का जन्म ३ फरवरी १९३१ को बिहार के सारण जिलान्तर्गत 'डुमरी बुजुर्ग' नामक गाँव में हुआ था। २२ वर्ष की अवस्था में ही आप ऋषिकेश के महान सन्त, **स्वामी शिवानन्द जी** से सन्यास लेकर सुरेन्द्र से स्वामी ज्योतिर्मयानन्द बन गए। नौ वर्षों तक योग-वेदान्त आरण्य अकादमी ऋषिकेश मे आध्यात्मिक व्याख्याता का कार्य करते हुए 'योग-वेदान्त' पत्रिका का सफल सम्पादन किया।

बहुत आग्रह के बाद आपने १९६२ में अमेरिका जाना स्वीकार किया वहाँ इन्टरनेशनल योग सोसायटी की स्थापना करके मियामी में इसका मुख्य केन्द्र स्थापित किया।

अपने मुख्य आश्रम से स्वामीजी भारत की ज्ञान-ज्योति का प्रसार कर रहे हैं। भारतीय दर्शन पर अब तक आपकी ७५ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, जिनका अनुवाद विश्व की अनेक भाषाओं में हो चुका है।

इन्टरनेशनल योग गाइड अँग्रेजी तथा **योगांजलि** हिन्दी इन दो मासिक पत्रिाओं के माध्यम से स्वामीजी की ज्ञान-गंगा में विश्व के लाखों साधक गोते लगाकर पावन बन रहे हैं।

आज अन्तराष्ट्रीय ज्ञान-गगन में स्वामीजी का स्थान सर्वोच्च है। प्रभात के प्रखर सूर्य सा प्रदीप्त स्वामीजी का प्रेरक साहित्य, अज्ञानान्धकार में सुप्त असंख्य हृदयों को परमानन्द तथा परम-ज्ञान की ज्योति प्रदान कर रहा है। समस्त विश्व श्रीस्वामीजी को **योगमार्तण्ड** के रूप में अभिनन्दित करता है।

आश्रम के प्रकाशन

			पेपर बैक	
१	योगाञ्जलि (मासिक-पत्रिका, वार्षिक)	:	७५/=	
२	मृत्यु और पुनर्जन्म	:	३०/=	५०/=
३	गृहस्थ जीवन निर्देशिका	:	३०/=	५०/=
४	आत्मोन्नति के लिए योग निबन्ध	:	३०/=	५०/=
५	जीवन मे योग	:	३०/=	५०/=
६	योग-संदर्शिका	.	३०/=	५०/=
७	सुख-स्वास्थ्य के लिये-योगासन	.	४०/=	६०/=
८	अपनी-बात भाग-१	:	३०/=	५०/=
९	योग से जीवन परिवर्तन	.	२५/=	५०/=
१०	आज के सन्दर्भ मे समन्वित योग		२०/=	३५/=
११	समन्वित योग एक परिचय	.	२०/=	३५/=
१२	देवीपूजा रहस्य		२०/=	४०/=
१३	ज्ञान योग	.	१५/=	२५/=
१४	योगविश्राम से स्वास्थ्य और सौंदर्य		१५/=	
१५	योगाचार	.	१०/=	
१६	सम्पूर्ण-योग सार		१०/=	
१७	व्यावहारिक साधना	.	१०/=	
१८	सकारात्मक सोच की कला			५०/=

1.	**International Yoga Guide (Yearly subs.)**	**. 150.00**
2.	**Applied Yoga 9`` x 12`` (Hard cover)**	**. 100.00**
3.	**Death and Reincarnation**	**. 100.00**
4.	**Concentration and meditation**	**. 100.00**
5.	**Study of Mind (Raj Yoga)**	**. 100.00**
6.	**Yoga Exercises for Health and Happiness**	**. 60.00**
7.	**The Way to Liberation Vol- I**	**. 60.00**
8.	**The Way to Liberation Vol- II**	**. 60.00**
9.	**Yoga for Sex Sublimation Truth and non-violence**	**. 60.00**
10.	**Yoga vasistha Vol- I,II, III, IV**	**. 80.00**
11.	**Mysticism of the Ramayana**	**. 80.00**
12.	**Mysticism of the Mahabharata**	**. 80.00**
13.	**Mysticism of the Devi Mahatmya**	**.. 80.00**
14.	**Yoga can change your life**	**.. 50.00**
15.	**Yoga wisdom of Upanishad**	**.. 50.00**

16. Yoga secrets of Psychic powers	...	50.00
17. Yoga of Divine Love	...	50.00
18. Yoga Essays for Self-Improvement	...	50.00
19. Yoga of Perfection (Bhagwat Gita)	...	50.00
20. Yoga of Enlightenment (18th Chapter)	...	50.00
21. Advice to students	...	60.00
22. Advice to house holders	...	60.00
23. Yoga Quotations	...	50.00
24. Yoga Mystic Poems	...	40.00
25. Yoga Stories and Parables	...	40.00
26. Vedanta in Brief	...	50.00
27. Raja Yoga Sutras	...	50.00
28. Yoga guide	...	50.00
29. Yoga in life	...	50.00
30. The Mystery of the soul	...	35.00
31. Bhagwat Gita (pocket size)	...	40.00
32. Waking Dream and Deep Sleep	...	30.00
33. Mantra, Kirtana, Yantra and Tantra	...	30.00
34. Beauty and Health Through Yoga Relaxation	...	30.00
35. The Art of positive Thinking	...	40.00
36. Integral Yoga Today	...	30.00
37. Integral Yoga-A Primer Course	...	40.00
38. Hindu Gods and Goddesses	...	30.00

स्वामीजी के प्रमुख हिन्दी कैसेट

१. सच्चा साधक कैसे बनें, चिन्ता से मुक्ति कैसे
२. मिथ्याभिमान को कैसे दूर करें, सामाजिक संदर्भ में योग साधना
३. देवी पूजा संदेश
४. लोनी आश्रम उद्घाटन
५. अपनी प्रतिभा का विकास कैसे करें, समय का उपयोग कैसे
६. मन का नियंत्रण कैसे, योग क्या है ?
७. ध्यान का अभ्यास कैसे करें
८. ईश्वर समर्पण कैसे विकसित करें, चिन्ता कैसे दूर करें
९. विजयदशमी संदेश, दैवी सम्पत्ति एक परिचय
१०. सहनशीलता कैसे विकसित करें
११. द्वेष को कैसे दूर करें, अपने जीवन को कैसे समृद्ध बनायें
१२. आपका वास्तविक स्वरूप क्या है, तनाव से मुक्ति कैसे

और अन्य कैसेट। प्रति कैसेट मूल्य ४०/ रुपये मात्र

गुजराती पुस्तकें:-मृत्यु और पुनर्जन्म, सकारात्मक सोच की कला मूल्य २०, १५ रु०

LIST OF CASSETTES

ENGLISH BY
SRI SWAMI JYOTIRMAYANANDA

131- How to over come Hatred.
How to Enrich your Life.

112- How to over come false pride
The pratice of Yoga is the world.

How to Develop surrender to god.
How to Remove Anxiety.

727- Positive Thinking I - IV
How to succeed in life.

Raja Yoga / Karma Yoga
Meditation August 11/94

193- How to be a True Sadhaka
How to overcome Anxiety

109 -How to Remove Jealousy
How to control imagination

Panchdashi I-1
Yoga Vasishtha 14-18

Bhagawatgita 1-8

126- How to withdraw the senses
How to Educate the subconscious

Yoga Vasistha-3-4-86
Yoga Vasistha VIII.24
Yoga Vasistha 8.17.82

Mandukya Upanishad II-22
Hindu Ethics for Teens 8-22-86

How To Develop the Art of Relaxation
What is Your Essential nature

Control of senses
Educate Your Subconscious

728- Positive Thinking V- VIII

189 Progress and How To Promote it.

868- Insight into Divine incarnation
The presence of God

871- Overcoming Tolorance/ Spiritual path

701- Dispassion/ Discrimination
Mental serenity.
708- Study of Scriptures / Mantra
Surrender to God/ Cultivation of virtues

712- Humility / Hypocrycy /Arrogance/ Pride

Study of Scriptures /How to be magnanimous

Yoga Vasishta August 19/85

How to practice meditation
Spirtualism vs Spirituality

Taittiriya Upanishad /May6-1984

Raj.Yoga I-4 -4-25-1976
Understanding Chitta and its waves

Inauguration of Loni Ashram Oct 1986

181- Kriya Yoga / How to overcome Pride

717-Prana Upasana I, II /Bhuma Upasana
So Ham Upasana.
716 -Madhu vidya Upasana
/Antar yami / Samvarga Upasana
718- Akshar vidya Upasana/ vibhuti Upasana
Gayatri Upasana/ Maha mrityunjay Upasana

Home Study Course - Intermediate unit IV
Raja Yoga II -19

Bhagawatgita 2 - 24-83
Advice to youth 8-19-89
Friday night lecture series III
731-Bhawana V, VI, VII, VIII
717- Friday Evening Lecture Series
What is Yoga

206-How to be free of Bondage
/Significance of Tat Twam Asi

Mother worship message
Insight into Divine wealth

189-You are the Architect of your Destiny
Progress & How to Promote it

880- The value of patience

The Virtue of cheerfulness

711- Compassion / Absence of greed
Absence of ficleness of mind / forbearance

T/T-37 What is your Essentiat nature
How to Develop the art of Relaxation

614- The control of mind

Friday Night lectures series II

Shandilya Bhakti Sutras I - 9

Friday Night lectures10-3-86 to 10-24-86
Insight into Austerity / I & II

Home study course: Advance unit IV
Panchdashi II -17

Mahabharat 11-2-86

Mahabharat IV-22-12-1-75

710- Steadyness in wisdom/ Charity
Renunciation / Fault finding nature

205 Tantra Yoga /Recreation

Hindi message for Devi Puja in Loni Ashram
Managing Stress through surrender to God

880 Value of Patience./ The virtue of cheerfulness

998- Strive for Perfection/Insight into states

of the mind.

994- Unfold your Hidden potentialities/
Mytism of Krishna Birth.

993 The Glory of satsanga
Mysticism of Lord Ganesh.

997 How to reduce stress in Daily life
The Mystic art of Divine Surrender.

995 Insight into the virtue of patience
Simplify yourself

79 Four Gatekeepers of liberation 7 5/31/
97 Toronto Canada.

PRICE PER CASSETTE RS 40/=

COMPLETE RAMAYANA IN 160 CASSETTES. RS 5000/SET

